SAPTHAGIRI (HINDI)
ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:52, Issue: 3
August - 2021, Price Rs.5/-

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

# सप्तगिरि

## सचित्र मासिक पत्रिका

अगस्त-2021 रु.5/-

भावयामि गोपालबालं मन -
स्सेवितं तत्पदं चिंतयेयं सदा ।।

- अन्नमय्या

क्षीराब्धिकन्यककु
श्रीमहालक्ष्मिकिनि
नीरजालयमुनकु
नीराजनम्।

- अन्नमय्या

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥२१॥
यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान्।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे ॥२२॥
*(- श्रीमद्भगवद्गीता १-२१-२२)*

अर्जुन ने कहा- है राजन्! कपिध्वज अर्जुन ने मोर्चा बाँधकर डटे हुए धृतराष्ट्र - सम्बन्धियों को देखकर, उस शस्त्र चलने की तैयारी के समय धनुष उठाकर हृषीकेश श्रीकृष्ण महाराज से यह वचन कहा- हे अच्युत! मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खडा कीजिये। और जब तक कि मैं युद्धक्षेत्र में डटे हुए युद्ध के अभिलाषी इन विपक्षी योद्धओं को भली प्रकार देख लूँ कि इस युद्धरूप व्यापार में मुझे किन-किन के साथ युद्ध करना योग्य है, तब तक उसे खडा रखिये।

मल निर्मोचनं पुंसां गंगा स्नानं दिने दिने।
सकृद्गीताम्भसि स्नानं संसार मल मोचनम्॥
(- गीता मकरंद, गीता का प्रभाव)

प्रति दिन का गंगा स्नान मनुष्यों के शरीर की मलिनता दूर करता है। परन्तु गीतारूपी जल में एक बार स्नान करने से सांसारिक मलिनता एकदम दूर हो जाती है।

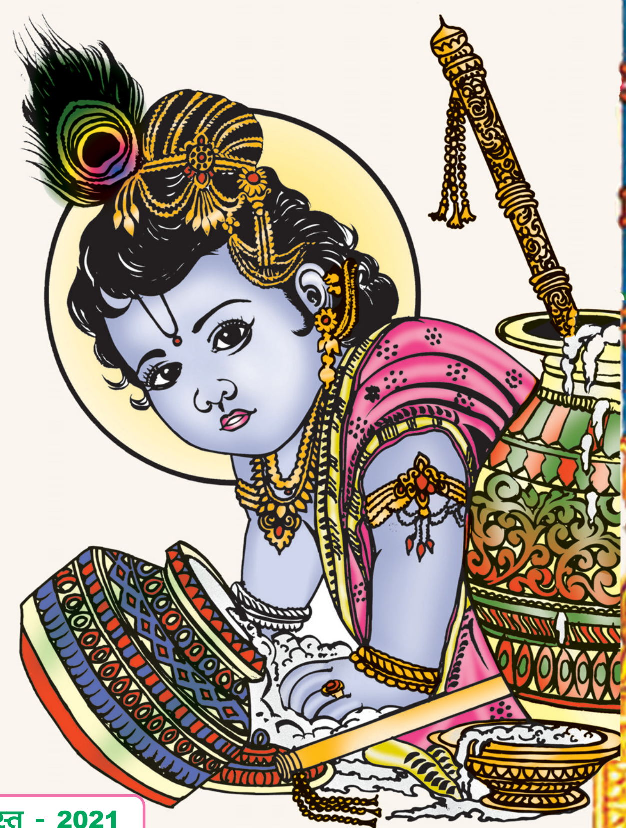

# तिरुपति एवं उसके आसपास के दर्शनीय क्षेत्र

**श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर :** आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में तिरुमल पर्वत के पदभाग में तिरुपति स्थित है। वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज से संबंध रखनेवाला यह पुरातन शहर है। ११३० ए.डि. में प्रख्यात वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज ने श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर का निर्माण कर, परिसर के छोटे प्रांत को आवास योग्य बनाकर, उसे 'तिरुपति' का नाम रखा। पुराणों के अनुसार, यहाँ के मूर्ति की वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक एवं महान आचार्य श्री रामानुज ने प्रतिष्ठा की। भगवान तो शयन मुद्रा में है। इस प्रांगण में श्री आण्डाल, श्री पार्थसारथी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी के मंदिर हैं।

**श्री कोदंडराम स्वामी मंदिर :** तिरुपति रेल्वेस्टेशन से एक कि.मी. दूरी पर श्रीराम का मंदिर है। लंका से वापस आते वक्त सीता लक्ष्मण सहित श्रीराम के तिरुपति आगमन के स्मरण में इस मंदिर का निर्माण किया गया है। शिलालेख के आधार से १५वीं शताब्दी में सालुव नरसिंह का अभ्युदय के लिए नरसिंह मोदलियार नामक व्यक्ति ने इस मंदिर का निर्माण किया।

**श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर :** तिरुपति से तीन कि.मी. दूरी पर भगवान शिव का मंदिर है। कपिल महर्षि द्वारा प्रतिष्ठापित होने के कारण भगवान को कपिलेश्वर और तीर्थ को कपिलतीर्थम् का नाम प्रचलित हो गया है।

**अलमेलुमंगापुरम् (तिरुचानूर) :** तिरुपति से ५ किलोमीटर दूरी पर यह मंदिर स्थित है। श्री वेंकटेश्वरस्वामी की पत्नी श्री पद्मावती देवी का मंदिर है। कहा जाता है कि तिरुचानूर में विराजमान श्री पद्मावती देवी के दर्शन के बाद ही तिरुमल-यात्रा की सफलता प्राप्त होगी। श्री पद्मावती देवी मंदिर की पुष्करिणी को 'पद्मसरोवर' कहा जाता है। पुराणों के अनुसार भगवती देवी ने इस पुष्करिणी के स्वर्णपद्म में स्वयं अवतार लिया है।

**श्रीनिवासमंगापुरम् :** तिरुपति से १२ किलोमीटर दूरी पर यह मंदिर स्थित है। ग्राम की आग्नेय दिशा में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। पुराणों में कहा गया है कि श्री वेंकटेश्वरस्वामी ने श्री पद्मावती देवी से विवाह करने के बाद तिरुमल जाने के पूर्व कुछ समय तक इस क्षेत्र में ठहरे। १६वीं सती में ताळ्ळपाक चिन्न तिरुवेंगडनाथ ने इस मंदिर का जीर्णोद्धारण किया।

**नारायणवनम् :** तिरुपति से लगभग २२ किलोमीटर की दूरी पर आग्नेय दिशा में स्थित मंदिर में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी विराजमान है। इसी पवित्र क्षेत्र में आकाशराजा की पुत्री श्री पद्मावती देवी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी का विवाह सम्पन्न हुआ था। इस महान घटना की याद में आकाशराजा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया।

**नागलापुरम् :** इस मंदिर में श्री वेदनारायण स्वामी विराजमान हैं। तिरुपति से लगभग ६५ कि.मी. दूरी पर आग्नेय दिशा में यह मंदिर स्थित है। विजयनगर शैली को प्रतिबिंबित करनेवाली यह सुन्दर नमूना है। गर्भगृह में दोनों ओर श्रीदेवी व भूदेवी सहित मत्स्यावतार रूपी श्री विष्णु की मूर्ति विराजमान हैं। मंदिर की विशिष्टता का प्रमुख कारण है, सूर्याराधना। हर वर्ष मार्च महीने में सूर्य की किरणे तीन दिन तक गोपुर से होती हुई गर्भगृह में स्थित मूर्ति को स्पर्श करती हैं। इसे सूर्य द्वारा भगवान की आराधना मानी जाती है। विजयनगर सम्राट श्रीकृष्णदेवराय ने अपनी माता के अनुरोध पर इस मंदिर का निर्माण कराया।

**अप्पलायगुंटा :** अप्पलायगुंटा में श्री प्रसन्नवेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। तिरुपति से १५ कि.मी. दूरी पर स्थित है। ब्रह्मोत्सव तथा प्लवोत्सव आदि को बडे पैमाने पर मनाया जाता है। इस प्राचीन मंदिर में श्री पद्मावती देवी एवं आंडाल की मूर्तियाँ विराजमान हैं। कार्वेटिनगरम् के राजाओं से निर्मित इस मंदिर के सामने श्री आंजनेय स्वामी की मूर्ति है। दीर्घकालीन व्याधियों के निवारण के लिए यहाँ विराजमान श्री आंजनेय स्वामी की भक्तों द्वारा पूजार्चना की जाती है।

**कार्वेटिनगरम् :** तिरुपति से ५८ कि.मी. दूरी पर पुत्तूर के निकट यह मंदिर स्थित है। रुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्री वेणुगोपाल स्वामी के दर्शन कर सकते हैं। प्राचीन काल में नारायणवनम् के राजाओं ने इसका निर्वहण किया। हनुमत्समेत श्री सीताराम व लक्ष्मण की एकशिला मूर्ति इस मंदिर में विराजमान हैं। ❖

# सप्तगिरि

## तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।।

वर्ष-५२ अगस्त-२०२१ अंक-०३

## विषयसूची


| | | |
|---|---|---|
| गरुड़ पंचमी | डॉ.के.एम.भवानी | 07 |
| कोल्हापुर महालक्ष्मी मंदिर और वरमहालक्ष्मी व्रत | कुमारी बी.आर.गरिमा राव | 10 |
| श्री हयग्रीवावतार | श्रीमती प्रीति ज्योतिन्द्र अजवालीया | 16 |
| भगवती गायत्री मंत्र और जप अनुष्ठान | श्री ज्योतिन्द्र के.अजवालीया | 19 |
| श्री पेरियवाच्चान पिळ्ळै | श्रीमती अनिता. रमाकांत दरक | 23 |
| श्री रामानुज नूट्रन्दादि | श्री श्रीराम मालपाणी | 26 |
| उडुपि श्रीकृष्ण मंदिर | डॉ.एच.एन.गौरी राव | 31 |
| शरणागति मीमांसा | श्री कमलकिशोर हि. तापडिया | 37 |
| श्री प्रपन्नामृतम् | श्री रघुनाथदास रान्दड | 39 |
| मंगलाशासन पाशुरम् | श्री के.रामनाधन | 40 |
| नायनाराच्चान्पिल्लै | श्री अनुज कुमार अगर्वाल | 42 |
| हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश | डॉ.एम.आर.राजेश्वरी | 43 |
| तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी) | प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव<br>प्रो.गोपाल शर्मा | 45 |
| श्रीमद्भगवद्गीता | डॉ.बी.के.माधवी | 47 |
| परम पवित्र मंगल द्रव्य नारियल का महत्व | डॉ.एस.हरि | 48 |
| आइये, संस्कृत सीखेंगे...!! | डॉ.सी.आदिलक्ष्मी | 50 |
| बालनीति - आप भला जग भला | श्रीमती के.प्रेमा रामनाथन | 51 |
| चित्रकथा - वेंगमांबा भक्ति | डॉ.एम.रजनी | 52 |
| क्विज | डॉ.दिव्या.एन | 54 |


website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org


*गौरव संपादक*
डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

*प्रधान संपादक*
डॉ.के.राधारमण

*संपादक*
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

*उपसंपादक*
श्रीमती एन.मनोरमा

*मुद्रक*
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

*स्थिरचित्र*
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।



जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशी वार्षिक चंदा .. रु.850-00



अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.


मुखचित्र - नवनीत कृष्ण, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ - श्री हयग्रीवस्वामी चित्र।

**सूचना**

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

*- प्रधान संपादक*

# सनातन हैंदव संस्कृति में मंदिरों का प्राशस्त्य

हमारे हैंदव संस्कृति संप्रदाय में मंदिरों का विशिष्ट प्राधान्य है। मंदिर-आलय जैसा कहने वाले पूजा-गृह में करनेवाले कैंकर्य सभी मानवाली के कल्याण व वृद्धि के लिए बन जाती है। हमारे देश में कई सारे मंदिर स्थित है। शैव, वैष्णव, देवी माँ, गाणपत्य, शाक्तेय जैसा विभिन्न प्रकार के आलय होने पर भी अंतिम उद्देश्य एक ही होता है कि विश्वमानवाली अभिवृद्धी ही प्रधान उद्धेश्य बन जाता है। वेदों व शास्त्रों के साथ-साथ मंदिर का निर्माण शिल्पशास्त्र के अनुरूप और उस देश, काल, गति के परिस्थितियों के प्रतीक के केंद्र बिंदू बन जाता है मंदिर। ऐसा चारित्रिक, ऐतिहासिक, घटनाओं को प्रतीक करते हुए कई मंदिर हमारे देश में स्थित हैं। धर्म, संप्रदाय, संस्कृति, शास्त्र, रीति-रिवाज आगे पीढियों तक पहुँचने के लिए मंदिर भी एक सांस्कृतिक रास्ता बन जाती है।

वेद, शास्त्र, धर्म आदि भी मंदिर जाने के लिए भक्त को कुछ नियम और शर्तें का पालन करने का अनिवार्य कर दिया है। शारीरिक शुद्धि के साथ-साथ मानसिक तनाव भी परिशुद्ध होना चाहिए। नहा के साफ कपडे पहन कर, मंगलकर द्रव्यों को ले जाकर भगवान जी का दर्शन करे तो भक्ति के साथ स्वास्थ्य भी अच्छी बन जाती है। मंदिर का परिक्रमा करना, तीर्थ सेवन करना, शठगोप धारण करना, मंदिर में संपन्न विविध यज्ञ-यागादि पूजा कैंकर्यों में भाग लेना, घण्टा नाद करना, भक्ति गीत आलापन करना, संगीत वाद्य प्रकंपन मानसिक शांति को बढाना, अन्नदान करना, दान-धर्म, दिया प्रज्वलन करना, अच्छे सकारात्मक शक्ति वृद्धि होकर, सात्विक भावनाएँ मिलती है। ऐसा सब कुछ चर्याओं के पीछे हमारे तंदुरुस्ती को बढ़ाने के लिए साथ-साथ भगवान जी के पास भक्त रहना मानसिक तनाव दूर होकर प्रशांत भावनाएँ मिल जाती है। कुछ मंदिरों में नीम, पीपल, बरगद, शमी, तुलसी वृक्षों का पूजा के पीछे का रहस्य वैज्ञानिकता युक्त स्वास्थ्य भी है। गोमाता सेवा, पूजा कैंकर्य ऐसा सब कुछ चर्याएँ जीव जंतुओं पर भूत दया, प्रकटित करना है।

हमारे हैंदव संस्कृति में भक्ति के साथ-साथ महोन्नत-उत्कृष्ट भावनाएँ पूजा कैंकर्यों के पीछे का रहस्य है। इस विषय को साबित करने के उद्देश्य से ति.ति.देवस्थान भी कई पुराने मंदिरों को जीर्णोध्दरण करके दूप-दीप-नैवेद्य कार्यक्रम के अंतर्गत मंदिरों को पूर्व वैभव लाया था। और इसके अनुरूप में कई जगहों पर नूतन आलय निर्माण कार्यक्रम भी शुरू किया था। भगवानजी के भक्ति तत्त्व को विश्वव्याप्त कराने के उद्देश्य से सभी जगहों पर श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी के मंदिरों का निर्माण कार्यक्रम को सुभारंभ किया। आर्तत्राण परायण, भक्तवत्सल भगवान श्रीनिवासजी को आराधना करके हमारी मनोकामनाएँ परिपूर्ण रूप से सफलीकृत कर लेंगे।

ॐ नमो वेंकटेशाय!

# गरुड़ पंचमी

- डॉ.के.एम.भवानी,
मोबाइल - ९९४९३८०२४६

हमारी भारतीय संस्कृति में भगवान का ही नहीं, प्रकृति और पशु-पक्षियों को भी पूजा करने का रिवाज है। जिससे हम फ़ायदा उठाते हैं और उन्हें पूजना हम अपना धर्म मानते हैं। इसीलिए अकसर हम देखते हैं कि लोग मंदिर में जाकर भगवान को जितनी श्रद्धा और भक्ति से पूजा करते हैं, उतनी ही भक्ति से मंदिर के बाहर पीपल, बरगद आदि पेडों की परिक्रमा भी करते हैं। ऐसी कोई भारतीय महिला शायद नहीं होगी, जो तुलसी की पौधे की पूजा न की हो। यह अतिशयोक्ति की बात नहीं है कि कई भारतीय महिलाएँ तुलसी को पानी दिए बिना खुद पानी नहीं पीती हैं। ऐसे ही परंपरा में पूजनेवाले त्योहार है वट सावित्री। इसी सिलसिले में पशु-पक्षियों को पूजा करनेवाले त्योहार हैं - नागुल चविती, नाग पंचमी, गरुड़ पंचमी आदि। इनमें 'गरुड़ पंचमी' माता-पुत्र के ममता भरी संबंध को याद दिलाता है।

**गरुड़ पंचमी :** गरुड़ भगवान विष्णु का वाहन है। उसे वैनतेय, खगराज, खगेश्वर, सुवर्णकाय, सुपर्ण आदि नामों से जाना जाता है। उसके जन्म की कहानी बहुत ही आश्चर्य जनक है।

प्रसिद्ध ऋषि कश्यप और विनता गरुड़ के माता-पिता है। कश्यप को कदरूवा नामक और एक पत्नी थी। उसके संतान नाग (साँप) हैं। सौत की संतान को देखकर विनता ने जलन और ईर्ष्या से अपने गर्भ पर मारा तो एक अधूरा शरीरवाला बच्चा जन्म लिया। उसका शरीर का ऊपरी भाग पूरा बना था लेकिन नीचे का भाग बिलकुल नहीं था। वह माँ के जल्दीबाजी पर नाराज होकर उसे शाप दिया था कि वह अपनी सौत की दासी बनेगी। वह माँ से यह विनती भी किया कि दूसरे बच्चे के विषय में ऐसी जल्दबाजी नहीं करेगी। उसकी बातों के अनुसार विनता ने बहुत समय तक इंतजार की। आखिर श्रावण शुक्ल पंचमी के दिन महान बलशाली गरुड़ का जन्म हुआ। बलशाली होते हुए भी दासी के पुत्र होने के कारण गरुड़ भी माता के समान नागों के दास बनकर जीने लगा लेकिन अपनी माता दासी बनकर जीना गरुड़ को दुखित करने लगा इसलिए वह दास्य विमुक्ति के बारे में सोचने लगा और अपनी ताई कदरुवा से इसी बात को पूछा तो वह गरुड़ की शक्ति से परिचित होने के कारण उससे कहा कि- "अगर तुम अमृत को लाकर हमें दोगे तो तुम्हारी माता को दासता से मुक्त करेंगे।" तब अपनी माँ को दासता से मुक्त कराने के लिए गरुड़ ने देवताओं से लड़ाई करके, उन्हें हराकर अमृत कलश को लेकर आने लगा,

तब देवराज इंद्र ने उन्हें रोककर कहा कि देवताओं के अतिरिक्त अमृत पान करना अन्य जातियों को निषिद्ध है इसलिए नागों को अमृत देना ठीक नहीं है। तब गरुड़ ने इंद्र से कहा कि वह अपनी माँ को दासता से मुक्त कराने के लिए उसे अमृत को ले जाना ही है। लेकिन वह ले जाकर वहाँ रखते ही इंद्र उपाय से अमृत कलश को वापस ले जाना है। इंद्र इस उपाय से खुश होकर मान लेता है। अपना वचन निभाते हुए गरुड़ अमृत कलश को ले आकर नागों को देकर कहता है कि स्नान करके पवित्र होकर उसे पीना होगा। नाग ऐसा करने के लिए तैयार हो जाते हैं तो उसी समय इंद्र आकर अमृत कलश को ले जाता है लेकिन गरुड़ अमृत लाकर देने के कारण नाग विनता को दासता से मुक्त कर देते हैं। इस प्रकार गरुड़ अपनी मातृ भक्ति से उसे दास्य विमुक्ति कर लिया। इसीलिए गरुड़ पंचमी का दिन माता-पुत्र के संबंध को याद दिलानेवाला दिन है। लोग मानते हैं कि अगर स्त्रियाँ इस दिन गरुड़ का स्वामी महाविष्णु की पूजा करने पर उन्हें गरुड़ जैसा महान बलशाली और मातृ भक्ति परायण पुत्र पैदा होंगे।

**भगवान विष्णु गरुड़ से खुश होना :** माना जाता है कि अमृत कलश अपने हाथ में रहने पर भी गरुड़ उसका सेवन नहीं किया। अपना वचन को निभाते हुए गरुड़ उसे नागों को दिया। खुद अमृतपान करने की इच्छा उनके मन में जागृत नहीं हुआ। उसका यह लक्षण से प्रभावित होकर महाविष्णु ने उसे वर माँगने को कहा। तब गरुड़ ने भगवान के वाहन बनने की इच्छा प्रकट की तो विष्णु ने उसकी इच्छा को मान लिया और तब से गरुड़वाहन धारी बन गए।

**तिरुमल से संबंध :** भगवान बालाजी सात पहाड़ों पर स्थित है। उनमें एक पहाड़ है गरुडाद्री। माना जाता है कि स्वामी का वाहन गरुड़ ही कलियुग में गरुडाद्री के नाम से तिरुमल में अवतरित होकर स्वामी की सेवा कर रहे है।

तिरुमल में स्वामी के ब्रह्मोत्सव गरुड़ ध्वजारोहण से ही शुरू होकर ध्वजावरोहण से समाप्त होता है।

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर की गरुड़ वाहन सेवा लोक प्रसिद्ध है। श्रीहरि ब्रह्मोत्सव में पांचवें दिन मनाया जाने वाला गरुड़ सेवा अत्यंत प्रसिद्ध सेवा माना जाता है। भक्त लोग यह मानते हैं कि गरुड़ वाहन पर भगवान वेंकटेश्वर का दर्शन करने से लोग पाप मुक्त हो जाते हैं। उस दिन सिर्फ यह सेवा देखने के लिए लाखों लोग दूर-दूर से तिरुमल आते हैं और गरुड़वाहन पर स्वामी का दर्शन करके अपना जन्म धन्य मानते हैं।

**पुराणों में गरुड़ :** हमारे कई पुराणों में भी गरुड़ की प्रस्तावना दिखाई देती है। मुख्यतः युद्ध के अवसर पर वीर मानते है कि अत्यंत शक्तिशाली गरुड़ को अपने ध्वज का पताका बनाकर युद्ध करने पर जीत आसानी से पा सकते हैं। इसलिए महाभारत युद्ध में भी गरुड़ ध्वज वाले वीरों का वर्णन मिलता है।

**गरुड़ का रामायण से संबंध :** रामायण में भी हमें गरुड़ दिखाई देता है। जब श्रीराम लंका में युद्ध करने लगता है तब रावण का पुत्र इंद्रजित श्रीराम और लक्ष्मण को नाग पाश में बंधित कर देता है तो अपनी प्रभु भक्ति का परिचय देते हुए गरुड़ युद्ध भूमि में पहुँचकर राम और लक्ष्मण को नाग पाश से बंधन मुक्त कर देता है।

**तेलुगु साहित्य से गरुड़ का संबंध :** तेलुगु साहित्य में महान भक्त कवि भगवान विष्णु को गरुड़ा गमनधारी वर्णन करते हुए अपनी रचनाएँ की। भगवान बालाजी का परम भक्त 'श्री ताल्लपाका अन्नमाचार्य जी', श्रीराम का परम भक्त 'राम दास' आदि भक्त गण अपनी कई

**तिरुमल के पहाड़ का आकार एक स्थान पर गरुड़ की तरह रहता है। तिरुमल से तिरुपति आते समय दूसरे मील से देखने पर पहाड़ का आकार पंख फैलाकर उड़ने को तैयार रहा गरुड़ जैसा लगता है।**

रचनाओं में गरुड़ की भगवान विष्णु से संबंध की रचनाएँ की। मुख्यतः अन्नमाचार्य जी ने अपनी कई रचनाओं में गरुड़ की प्रस्तावना किया।

**कुछ झलक :**

*//गरुडुनि मीदटि घनुडितडु*
*सिरुलिंदरिकी निच्चे चेलुवितडु//*

*//कमला रमणुनि कल्याणमुनकु*
*तमिनदे गरुड़ध्वज मोसगे//*

*//गरुड गमन गरुड़ध्वज*
*नरहरि नमो नमो नमो//*

*//गरुड तुरंगा कारोत्तुंगा*
*शरधि भंगा फणिशया नांगा//*

*//इटु गरुड़नी नीवेक्किननु पट पट*
*दिक्कुल भग्गाना बगिले*
*एगासिना गरुड़नी येपुना धा यानी*
*जिगी दोलका चबुकू चेसिननु*
*निगमांतंबुलू निगम संघमुलू*
*गगनमु जगमुलु*
*गड़ा गडा वडके//*

*//गरुड़ गमाना रारा, ननु नी करुण नेलुकोरा//*

(रामदास)

कलियुग के अन्नमय्या, श्रीराम दास जैसे भक्त की बात ही नही, द्वापर युग में महाविष्णु का अवतार श्रीकृष्ण स्वयं सामने बैठकर सुनते समय भक्ताग्रगण्य भीष्म अपने विष्णु सहस्रनामों में कहा-

*महर्धिः रूद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः*

इससे पता चलता है कि गरुड़ भगवान को कितना प्रिय है इसीलिए आज के भक्त गण भी गरुड़ को महाविष्णु का प्रीति पात्र जानकर उन्हें स्तोत्र किया। हम भी उसी परंपरा को निभाते हुए जोर से कहेंगे-

**॥ गरुड़ वाहना गोविंदा ॥**

# कोल्हापुर महालक्ष्मी मंदिर और वरमहालक्ष्मी व्रत

- कुमारी बी आर गरिमा राव
मोबाइल - ८३१०६०६०४९

अगस्त मास श्रावण मास है। सब शुभ फल देने का मास है। अनेक व्रत इस महीने में मनाये जाते हैं। इस मास में वरलक्ष्मी की पूजा की जाती है। इस वरलक्ष्मी व्रत के अवसर पर महाराष्ट्र के कोल्हापुर में पंचगंगा नदी के तीर पर स्थित प्राचीन महालक्ष्मी मंदिर के बारे जानेंगे, जिसके दर्शन करने से सुख-समृद्धि का प्राप्त होता है। यहाँ माता को 'अंबाबाई', 'आई' 'भवानी', 'करवीर वासनी' और 'अमलादेवी' आदि अनेक नाम से अभिहित किया गया है।

## पौराणिक आधार :

धर्म ग्रंथों के अनुसार जहाँ सती देवी के शरीर के अंग गिरे, वे क्षेत्र शक्ति पीठ बन गये। यह भी मान्यता है कि सती की आंखें इस क्षेत्र में गिरी थी, इससे कोल्हापुर क्षेत्र को शक्तिपीठों में एक प्रसिद्ध पीठ माना जाता है। विविध पुराणों में महालक्ष्मी के बारे में उल्लेख मिलते हैं। कोल्हापुर महालक्ष्मी स्कंद पुराण के, शंकर संहिता के अनुसार १८ शक्तिपीठों में से एक है; देवी पुराण के अनुसार ५१ देवी शक्तिपीठों में से एक है; देवी स्तोत्र के अनुसार १०८ शक्तिपीठों में से एक है। दुर्गा सप्तशती में भी महालक्ष्मी का उल्लेख है। पद्म, स्कंद पुराणों और देवी भागवत में इस क्षेत्र को, 'करवीर क्षेत्र' और देवी को 'करवीर वासिनी' नाम से उल्लेखित किया गया है। काशी के समान कोल्हापुर भी 'अविमुक्त क्षेत्र' कहा जाता है।

## कोल्हापुर वासिनी महालक्ष्मी :

पुराणों के अनुसार जब अमृत के लिए क्षीरसागर मंथन किया तब १४ रत्न निकले थे। उनमें महालक्ष्मी भी निकली, जिन्होंने महाविष्णु को वरण किया। तब से वे वैकुंठ में महाविष्णु के साथ उनके वक्षःस्थलवासनी बनकर लोक पालन करने लगी। एक बार भृगु महर्षि का आगमन वैकुंठ में होता है। तब महाविष्णु माता के साथ शेषनाग पर शयनमुद्रा में थे; महर्षि के आगमन से अनभिज्ञ थे। इससे कुपित भृगु महर्षि ने अपने पाँव से विष्णु के वक्षःस्थल पर मारा। अपनी भूल के लिए महाविष्णु ने महर्षि से क्षमा याचना की और उनका सत्कार किया। महर्षि शांत होकर वहाँ से चले जाने के बाद महाविष्णु को महर्षि पांव से मारना अपना अपमान मानकर माता लक्ष्मी वैकुंठ को छोड़कर सह्याद्री पर्वत प्रांत कोल्हापुर आकर स्थिरवास करने लगी।

एक दूसरी मान्यता के अनुसार कथा इस प्रकार चलती है जो कोल्हापुर नाम से भी संबंधित है। प्रचलित

कथा के अनुसार केशी नाम के राक्षस का पुत्र कोल्हासुर ने ऋषियों और देवताओं को बहुत सताता था। जब सभी लोग माता लक्ष्मी से प्रार्थना करते हैं तो तब लक्ष्मी माता दुर्गा का अवतार लेकर ब्रह्मास्त्र से कोल्हासुर का वध किया। मरने से पहले कोल्हासुर ने माता से यह वर मांगा कि इस क्षेत्र का नाम उसके नाम पर हो। कालांतर में 'कोल्हासुर' शब्द 'कोल्हापुर' में बदल गया।

पुराणों के अनुसार कोल्हापुर परशुराम के समय में भी स्थित था। विश्वास किया जाता है कि इस क्षेत्र में महालक्ष्मी के साथ महाविष्णु भी रहते हैं। जिस प्रकार प्रलय काल में महाशिव ने अपने त्रिशूल से काशी की रक्षा की थी, उसी प्रकार लोगों का विश्वास है कि माता अपने करों से कोल्हापुर को ऊपर उठाकर रक्षा करेगी। इससे माता को 'करवीर वासिनी' नाम से पुकारा जाता है; विश्वास किया जाता है कि दत्तात्रेय हर दिन दोपहर को माता के पास भिक्षाटन के लिए आते हैं। जब शंकाराचार्य का आगमन इस क्षेत्र में हुआ था, तब उनके द्वारा श्रीचक्र की स्थापना की गई।

### मंदिर का रोचक इतिहास :

चारित्रिक आधार यह दिखाते हैं कि १०९ ई. में राजा कर्नाडु ने जंगल को साफ कर मंदिर को प्रकट करवाया। ८वीं शताब्दी में भूकंप से मंदिर गिर गया था। ९वीं शताब्दी में गांदीवाधिक्स नामक राजा ने महाकाली के मंदिर के निर्माण के समय इस मंदिर का विस्तार किया था। ११७८-१२०९ शताब्दी के दौरान जयसिंह और सिंधवा के शासनकाल में दक्षिण द्वार और अति बलेश्वर मंदिर का निर्माण किया गया। १२१८ में यादव राजा तोलम ने महाद्वार बनवाया और देवी को आभूषण समर्पित की; मंदिर को सुंदर बनाया। बाद में मराठों के समय में मंदिर का जीर्णोद्धार हुआ। मुसलमानों के आक्रमण के दौरान उनसे कई सुंदर मूर्तियों को ध्वंस किया गया। इन आक्रमणकारियों से मूर्ति को बचाने के लिए उसे छिपा दिया गया था। फिर संभाजी के दौरान उस मूर्ति को खोज निकालकर २६ सितंबर १७१२ सोमवार अश्विन विजयदशमी के दिन पुनः स्थापित किया गया था। देवी की महिमा से यह क्षेत्र बहुत प्रसिद्ध हुआ। कालांतर में महालक्ष्मी महाराष्ट्र की देवी बन गई।

### मंदिर की बनावटशैली :

१३०० साल पुराना इस प्राचीन मंदिर का निर्माण हेमाडपंती शैली में किया गया है। इस मंदिर का प्रांगण बहुत विशाल है और उसके चारों ओर का प्राकार बड़े-बड़े दीवारों से निर्मित है। प्रांगण के मध्य में माता का मंदिर अद्भुत है। पुरे मंदिर में अनेक शिल्पकलाओं से भरा हुआ है। मंदिर के चार प्रवेश द्वार और पांच गोपुर है। मध्य में एक गोपुर और उसके चार दिशाओं में चार गोपुर है। पश्चिम दिशा की ओर जो प्रवेश द्वार है, वह मुख्य द्वार कहलाता है। अन्य मंदिरों में गर्भगृह उत्तर या पूर्वी दिशा की ओर होते हैं। इस मंदिर की विशिष्टता यह है कि गर्भगृह पश्चिम दिशा की ओर है। मंदिर के प्रांगण में छोटे बड़े बहुत से मंदिर है। गर्भगृह के सामने मुख मंटप दिखाई पड़ता है। इसके उत्तरी दिशा में महाकाली मंदिर और दक्षिण दिशा में सरस्वती मंदिर है। गर्भगृह के चारों ओर छोटा सा प्रदक्षिणा पथ है। गर्भगृह के बीच में छः कदम चबूतरा है। इस चबूतरे पर दो कदम वाले पीढ़ी पर माता

आसीन है। गर्भगृह के एक दीवार पर श्रीचक्र है जिसको शंकराचार्य से स्थापित किया गया था। इस मंदिर में दो हाल है - दर्शन मंडप और कूर्म मंडप। दर्शन मंडप से माता का दर्शन प्राप्त किया जाता हैं। कूर्म मंडप में भक्तों पर शंख द्वारा पवित्र जल को चिढका जाता है। काले पत्थरों पर अद्भुत नक्काशी हजारों वर्षों पूर्व शिल्पकारों की निपुणता को प्रदर्शित करती है। गर्भगृह के ऊपर एक और मंजिल है जहाँ शिवलिंग प्रतिष्ठित है, जो 'मात्रुलिंग' कहा जाता हैं। वर्ष में एक बार शिवरात्रि के दिन इस मंदिर को खोला जाता है। मंदिर के अद्भुत स्थापत्य की विशिष्टता यह है कि वर्ष में दो बार सूर्य की किरणे माता को छूती हैं।

इस भव्य मंदिर के अन्दर नवग्रहों, भगवना सूर्य, महिषासुर मर्दिनी, विठ्ठल रखमाई, महाशिव, विष्णु, तुलजा भवानी, गणेश, बालाजी, राधा कृष्ण, सिम्हावाहिनी और कालभैरव आदि देवी देवताओं के मंटप (उप आलय) भी दिखाई देते हैं। प्रांगण में स्थित मणिकर्णिका कुंड के तट पर विश्वेश्वर महादेव मंदिर भी स्थित हैं।

कोल्हापुर में दो प्रसिद्ध मठ है। एक जिनेश्वर स्वामी मठ, दूसरा शंकराचार्य मठ। १५ कि.मी. दूरी पर ज्योतिबा मंदिर पर्वतों के बीच में है। एक ही छत के नीचे ज्योतिबा के गर्भगृह के अलावा रुक्मिणी देवी महादेव के अलग-अलग गर्भगृह है। माना जाता है कि ज्योतिबा महालक्ष्मी के भाई है जिसको बद्रीनाथस्वामी ने महालक्ष्मी की देखभाल के लिए भेजा था। ५ किलोमीटर दूरी पर तिम्लबाई का मंदिर है जो माता की बहन मानी जाती है।

## प्राचीनतम मूर्तियों में माता की मूर्ति भी एक है :

बताया जाता है कि यहाँ की लक्ष्मी प्रतिमा लग-भग सात हजार साल पुरानी है। माता चांदी के भव्य सिंहासन पर विराजमान हैं। काले पत्थर से निर्मित अंबाबाई की प्रतिमा की ऊंचाई करीब ३ फीट है। देवी की मूर्ति के पीछे, देवी का वाहन शेर की प्रतिमा भी मौजूद है। देवी के मुकुट में भगवान विष्णु के शेषनाग का चित्र भी रचा गया है। देवी अंबाबाई के चारों हाथों में से दाएं हाथ में निम्बू, ऊपरी बाएं हाथ में गधा, ऊपरी दाई हाथ में एक ढाल और निचले बाएं हाथ में एक कटोरा लिए है। अन्य हिंदू पवित्र मंदिरों में मूर्तियाँ पूरब या उत्तर दिशा की ओर दिखती होती हैं। लेकिन यहाँ देवी अंबाबाई पश्चिम दिशा में स्थापित हुई है। गहनों से सजाया हुआ मुकुट लग-भग चालीस किलोग्राम वजन है। देवी की पालकी पर २६ किलो सोना लगा है। माता के दो सोने की पादुकायें भी है। माता के तरह-तरह के अनेक आभूषण है। बहुमूल्य पत्थरों तथा रत्नों के गहनों की राशि है; जिनको समय-समय पर अनेक राजाओं ने भेंट के रूप में माता को समर्पित किया था।

## पूजा विधि :

माता को हर दिन पांच बार पूजा की जाती है। हर दिन सुबह ४.०० बजे माता को स्नान कराते है। माता के मस्तिष्क पर चंदन का लेप लगाया जाता है और अन्य वस्त्राभूषणों से अलंकार किया जाता है। उसके बाद की जाने वाली आरती को 'काकड़ आरती' कहा जाता है। पहले माता की आरती की जाती है फिर उसके बाद मंदिर के अन्य देवी देवताओं की आरती की जाती है। ८:०० बजे षोडशोपचार पूजा के बाद नैवेद्य चढ़ाया जाता है। १२.३० को माता को अति सुंदर गहनों से अभूषित किया जाता है। १३० ग्राम का मंगलसूत्र, अलभ्य पत्थरों से बनाए गए हार, कुंडलियाँ जैसे अनेक प्रकार के आभूषण धारण करवाये जाते हैं। शाम को ७.३० बजे घंटा नाद के पश्चात माँ की आरती की जाती है जो 'भोग आरती' कहा जाता है। शेज आरती ९.३० बजे की जाती है। शक्कर के साथ दूध मिलाकर माता को चढ़ाया जाता है। रात ८.०० बजे आरती के बाद माँ के सारे आभूषणों को उतार दिए जाते हैं और मंदिर के खजाने में वापस रख दिए जाते हैं। हर शुक्रवार और पूर्णिमा के दिन माता को विशेष पूजायें और अलंकार किए जाते हैं तथा उत्सव में देवी की प्रतिमा को मंदिर के प्राकार में जुलूस के समय तीन बार परिक्रमा की जाती है। कोल्हापुर के महालक्ष्मी मंदिर में मांगी गयी हर इच्छा पूरी होती है।

### उत्सव और त्योहार :

यहाँ किरणोत्सव, दीपावली, नवरात्रि आदि उत्सव तथा त्योहार धूम-धाम से मनाये जाते हैं। इन उत्सवों में अनेक भक्त श्रद्धा और उत्साह से भाग लेते हैं।

### किरणोत्सव - अद्वितीय घटना :

इस मंदिर को ऐसा निर्माण किया गया है कि साल में दो बार, अर्थात् उत्तरायण और दक्षिणायन में सूर्य की किरणें तीन-तीन दिन माता पर पड़ती हैं। इस अद्भुत प्राकृतिक घटना को उत्सव के रूप में मनाया जाता है जो 'किरणोत्सव' कहा जाता है। किरणोत्सव के दिन, इस विशेष घटना को देखने के लिये भारत के कोने-कोने से हर साल हजारों लोग कोल्हापुर आते हैं। उस दिन दृश्य ऐसा दिखाई पड़ता है कि मानो स्वयं सूर्यदेव ही माता की आराधना कर रहे है।

मंदिर के गर्भगृह में पश्चिमी दीवार पर एक खिड़की बनी हुई है। गर्भगुह में स्थित माता को पश्चिमी दिशा में अस्त होनेवाले सूर्य की किरणें छूती है। इससे यह उत्सव शाम को मनाया जाता है। हर साल जनवरी ३१, फरवरी १, और फरवरी २ को तीन दिन और नवंबर में ९, १० और ११ तारीख को तीन दिन गर्भगृह की खिड़की से सूर्य की किरणें माता को नमन करती हैं। पहले दिन सूर्य किरणें महालक्ष्मी के चरणों को स्पर्श करती हैं; दूसरे दिन कमर पर प्रकाश पड़ता है और तीसरे दिन मुख मंडल को देदीप्यमान करती हैं। किरणोत्सव के दोनों अवसरों पर परिसर के दीप बुझा दी जाती हैं। यह अनुपम दृश्य 'सोने का स्नान' भी कहा जाता है।

### नवरात्रि उत्सव : बहन तेंब्लाई से मुलाकात :

हर वर्ष नवरात्रि उत्सव बहुत आडंबरता से मनाया जाता है। नवरात्रि में हरेक दिन देवी को अलग-अलग रूपों से सजाया जाता है। आश्विन शुक्ल पंचमी के दिन माता महालक्ष्मी की उत्सव मूर्ति को कोल्हापुर से पांच किलोमीटर दूरी पर स्थित माता की बहन तेंब्लाई के पास शोभा यात्रा करते हुए ले जाते हैं। कहा जाता है कि कभी इन दोनों बहनों के बीच मनमुटाव होने से अपनी बहन से दूर जाकर पूर्वी दिशा की ओर मुंह करके बैठ गई है। नवरात्रि के पंचमी को माता महालक्ष्मी स्वयं अपनी बहन के पास जाती है।

### दीपावली : भगवान बालाजी से शालू का उपहार :

दीपावली के दिन माता के दर्शन के लिए लाखों लोग आते हैं और माता के गजलक्ष्मी रूप का दर्शन करके पुनीत हो जाते हैं। कहा जाता है कि तिरुपति बालाजी मंदिर से वेंकटेश्वर स्वामी की पत्नी महालक्ष्मी उनसे रूठकर कोल्हापुर आ गई थी। इससे दीपावली के अवसर पर तिरुपति मंदिर की ओर से सोने के धागों से बुनी विशेष साड़ी महालक्ष्मी को समर्पित की जाती हैं, जो स्थानीय भाषा में 'शालू' कहा जाता है। यह विश्वास किया जाता है कि उस व्यक्ति की तिरुपति यात्रा तब तक पूरी नहीं होती है जब तक वह यहाँ आकर महालक्ष्मी की पूजा-अर्चना ना करे। दीपावली के रात को माँ का विशेष अलंकार और पूजा किये जाते हैं। दीपावली की रात को दो बजे मंदिर के शिखर पर दिया प्रकाशित किया जाता है, जो अगली पूर्णिमा तक प्रज्वलित रहता है। इस दिन पर माता से मांगी गयी मुरादे जरूर पूर्ण हो जाती है। इससे अशेष संख्या में भक्त यहाँ आकर माता से प्रार्थना करते हैं।

### सूर्यग्रहण के दिन तीर्थ स्थान :

इस क्षेत्र में महालक्ष्मी अधिष्ठात्री देवी है। पुराण के अनुसार साढे तीन करोड तीर्थ सूर्यग्रहण के दिन यहाँ विराजमान रहते हैं। विश्वास किया जाता है कि सूर्यग्रहण के दिन इस क्षेत्र में स्नान करने से हमारे घोर पाप भी मिट जाते हैं। इससे इस तीर्थ में स्नान करने के लिए असंख्याक लोगों का आगमन होता है।

चैत्र पूर्णिमा के दिन भी बड़ा उत्सव मनाया जाता है। उस दिन माता की उत्सव मूर्ति को पूरे शहर में शोभायात्रा करवाते हैं।

यह क्षेत्र धार्मिक और ऐतिहासिक रूप से महत्व रखता है। अन्य क्षेत्रों से भिन्न अनेक विशिष्टताओं से भरा

महिमान्वित इस क्षेत्र में माता के दर्शन करने हेतु भक्तों के साथ-साथ यात्रियों का भी आगमन होता हैं। श्रद्धा एवं भक्ति से प्रार्थना करने पर माता प्रसन्न हो जाती है; मनचाहे वर को प्रदान करती है -

*"नमस्तेस्तु महामाये श्रीपीठे सुर पूजिते!*
*शंख चक्र गदा हस्ते महालक्ष्मी नमोस्तुते!!"*

*"नमस्तेतु गरुडारुढे कोलासुर भयंकरी!*
*सर्वपाप हरे देवी महालक्ष्मी नमोस्तुते!!"*

## वरलक्ष्मी व्रत :

व्रत का अर्थ है निष्ठा। देवी-देवताओं पर जो भक्ति भाव हम दिखाते हैं, वह व्रत के द्वारा पूजा के रूप में आचरण किया जाता है। व्रतों के उल्लेख को हम स्मृति - पुराणों में देख सकते हैं। भविष्योत्तर पुराण में वरलक्ष्मी व्रत के बारे में प्रस्ताव है। महाशिव और पार्वती के संवाद में इस व्रत के महत्व के बारे में वर्णित किया गया हैं। यह व्रत श्रावण पूर्णिमा से पहले शुक्रवार के दिन विवाहित महिलाओं से मनाया जाता है। यह भारत के कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु और महाराष्ट्र में प्रसिद्ध है। माता वरलक्ष्मी में अष्ट लक्ष्मियाँ समाहित हुयी हैं। इस व्रत को विवाहित महिलाएँ अपने पति और संसार की भलाई के लिए अत्यंत भक्ति और उत्साह से मनाती है। इस व्रत के दौरान घर-घर में संभ्रम दिखाई देता है।

## व्रत की पूर्व तैयारियाँ :

वरलक्ष्मी व्रत के पहले दिन ही व्रत की तैयारियाँ शुरू हो जाती है, ताकि व्रत सुगमता से पूर्ण हो सके। पूरे घर को साफ किया जाता है। मुख्य द्वार तथा पूजागृह के द्वार को आम के पत्तों से तोरण बांधे जाते हैं; फूल माला से सजाये जाते हैं। घर के आंगन में रंगों से भरी रंगोली रची जाती है। व्रत के लिए आवश्यक पूजा सामग्री - कुंकुम, हल्दी, अक्षत, अगरबती, धूप, दीप, श्री गंध, कपूर तथा अनेक तरह के फूल, मुख्यतया कमल पुष्प, पांच तरह के फल और दोर बंधन के लिए १२ गांठों का धागा और चूडियों को पहले ही इकट्ठा करके रखना चाहिए। माता के नैवेद्य के लिए एक थाली में पांच तरह के फल, नारियल, पान, सुपारी और दक्षिणा को रखना चाहिए। ब्राह्मण के दान के लिए वायन सामग्री (चावल, दो नारियल, फल, सुपारी और पान तथा दक्षिणा) को एक थाली में रखकर एक ओर रखना चाहिए।

इस शुभ अवसर पर महिलाओं को जल्दी उठकर नहाके तन मन से शौच होकर माता के महानैवेद्य के लिए भक्ष्य, खीर, शरबत, कच्चे दाल (तेलुगु में वड़पप्पु और कन्नड़ में कोसंबरी कहा जाता हैं), तरह-तरह के पक्वान्न, फलोदक (नारियल का पानी) और पंचामृत (कच्चा दूध, दही, शक्कर, शहद और घी) को तैयार करके रखना हैं। सौभाग्यवती महिलाएँ रेशम की साड़ी और गहने पहनकर पूजा करती है। वरलक्ष्मी पूजा की तैयारी चांदी या कांसे के कलश को सजाने से शुरू होती है। कलश के चारों ओर चंदन और कुंकुम से पांच जगहों पर लेपना हैं। कलश में शुद्ध पानी, हल्दी, कुंकुम, अक्षत, कलश सामग्री, पांच तरह के फल, सिक्का, तुलसी डाले जाते हैं। कलश के ऊपर पाँच आम के पत्ते को रखके हल्दी से लेपित नारियल को रखा जाता है। इस नारियल को वरलक्ष्मी की मुखौटे से सजाया जाता हैं। रेशम की साड़ी से सजे गये एक बर्तन पर इस कलश को रखा जाता हैं; विभिन्न आभूषणों से सजाया जाता है।

## व्रत का अनुष्ठान :

माता की पूजा के लिए मंटप बनाने के लिए व्रत करने की जगह को स्वच्छ किया जाता है। वहाँ पद्म की रंगोली बनाकर उस पर एक बड़े पीठ को रखकर उसके चारों ओर चार केले के शाखाओं से तथा आम के पत्तों से सजाया जाता है; फूलों से सजाके शोभायमान बना जाता है। पीठ पर चावल डाल के कलश से युक्त बर्तन को उस पर रखते हैं। मंडप के दोनों ओर घी के दीपक जलाए जाते हैं। पीठ के सामने अष्टपद्म की रंगोली खींची जाती है। पूजा मंडप में देवी स्वरूप कलश को पूर्वी दिशा की ओर स्थापित करना चाहिए।

शुभ मुहूर्त में पुरोहित से विधिवत पूजा आरंभ की जाती है। एक और छोटे कलश को रखकर उसके पानी

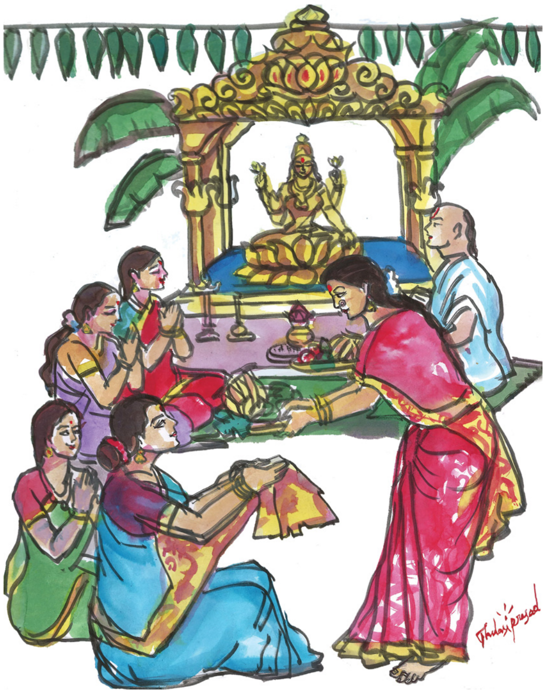

से सब पूजा द्रव्यों और देवता को पवित्र करना चाहिए। पहले आचमन के बाद, व्रत का आरंभ गणपति की पूजा से होती है। अनंतर माता की प्राण प्रतिष्ठा करके श्रीलक्ष्मी को षोडशोपचार पूजा की जाती है। माता को पंचामृत अभिषेक के बाद वस्त्र (कपास की माला) को, फूल मालाओं को समर्पित किया जाता है। फिर कुंकुमार्चना की जाती है; धूप का समर्पण किया जाता हैं; महा नैवेद्य निवेदित किया जाता है। देवी के दाई ओर पान में १२ (ग्रंथि) गांठों के दोरबंधन के धागे को रखकर ग्रंथि पूजा की जाती है। अंत में माता को घंटा नाद के साथ यहाँ मंगल आरती की जाती है। भक्तगण भक्ति और पूर्ण विश्वास के साथ प्रार्थना करते हुए माता के प्रति नतमस्तक हो जाती हैं। पवित्र दोरे की धागे के प्रति को हाथ में दूसरी सुवासिनियों से बंधवाती है। ब्राह्मण को वायन दान देकर प्रणाम करती है। शाम को अन्य सुहगिनियों को आमांत्रित करके, कुंकुम, चूडियाँ, फल, तांबूल देकर उनसे सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद पाती है। शाम को फिर से माता को पूजा करके कीर्तन गाए जाते है। वरलक्ष्मी व्रत कथा सुनने के बाद आरती उतारी जाती है। दूसरे दिन माता को पुनःआने की प्रार्थना करते हुए विसर्जित किया जाता है। कलश के पानी को सब पर छिड़का जाता है।

मान्यता है कि इस दिन जो महिलाएँ विधि-विधान पूर्वक और पूर्ण निष्ठा से व्रत को करती हैं, वह सुख, शांति, स्वास्थ्य, संपत्ति और सौभाग्य आदि को प्राप्त करती है।

## वरलक्ष्मी व्रत कथा :

एक बार कैलास में भगवान शंकर से पार्वती एक ऐसे व्रत के बारे में पूछती है जिसके आचरण से सब पाप मिट जाते हैं, और सकल ऐश्वर्य प्राप्त हो जाते हैं। तब भगवान उमापति बताते हैं कि सब व्रतों में उत्तम वरलक्ष्मी व्रत के व्रताचरण से पुत्र पौत्रों से जीवन सुखदायक होगा। इस संदर्भ में शंकर भगवान पार्वती को वरलक्ष्मी व्रत कथा को सुनाते है - कुंडिना नामक एक श्रीमंत नगर था। उस नगर में चारुमती नामक एक ब्राह्मण स्त्री थी जो पतिव्रता नारी थी; सास ससुर की सेवा में निरत रहती थी; सकल शास्त्रों में निपुण थी; हमेशा मधुर भाषण करती थी। उस निर्मल चित्त चारुमति से लक्ष्मी देवी प्रसन्न होकर एक दिन स्वप्न में आकर बताती है कि वह स्वयं वरलक्ष्मी है और श्रावण मास के पूर्णिमा के पहले आने वाले शुक्रवार को उसकी आराधना करें; ताकि उसके इष्टार्थ पूर्ण हो जाएंगे। चारुमति माता की स्तुति करती है और सुबह अपने बंधु मित्रों से इस स्वप्न के बारे में बताती है। श्रावण मास में पूर्णिमा से पहले आने वाले शुक्रवार को सब औरतें स्नान करके विविध वस्त्रों से अलंकृत होकर भक्ति पूर्वक कल्पोक्तप्रकारेण वरलक्ष्मी व्रत का आचरण करती है। पवित्र दोरे को अपने दाएं हाथ को बंधवाती हैं। इस संदर्भ में ब्राह्मणों को भोजन परोसा जाता है।

पूजा के अंत में ही चारुमति और अन्य स्त्रियों के शरीर अमूल्य आभूषणों से सज गये। उनके घर पर भी धन-धान्य समृद्धि और सकल ऐश्वर्य से संपन्न हो गए थे। सब स्त्रियाँ चारुमति की प्रशंसा करने लगी। शंकर भगवान गौरी माता से कहते कि उस समय से वरलक्ष्मी व्रत जगत में प्रसिद्ध हो गया। इस व्रत कथा को सुनने वाले भी देवी की कृपापात्र होंगे।

# श्री हयग्रीवावतार

- श्रीमती प्रीति ज्योतिन्द्र अजवालीया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

**श्री**हरि विष्णु सृष्टि पालनकर्ता है। श्रीहरि विष्णु भगवान ने बहुत सारे अवतार लिया है। सभी अवतार का आख्यान बहुत ही सुंदर है और उसका पठन मोक्षदायक है।

आज हम यहाँ, भगवान का बहुत ही सुंदर हयग्रीव अवतार का पठन करेंगे।

*हस्तैर्दधानम् मालां च पुस्तकं वर पंकजम्।*
*कपूर्रभम् सौम्यरूपम् नाना भूषणभूषितम्।।*

हयग्रीव अवतार विष्णु के चौदह अवतारों में से एक थे। इसका सिर अश्व का और शरीर मनुष्य का था। मधु और कैटभ नाम के दैत्य वेदों का अपहरण किया था। उनके उद्धार के लिये श्री विष्णु भगवान ने श्रावण शुद्ध पूर्णिमा के पवित्र दिन हयग्रीव अवतार लिया।

सभी वैष्णवों को श्री हयग्रीव जयंती का महोत्सव मनाना चाहिए। स्कंदपुराण के अनुसार -

*''हयग्रीव जयन्त्यास्तु अतोऽत्रैव महोत्सवः।*
*उपासनाव्रतां तस्य नित्यस्तु परिकीर्तितः।।''*

अर्थात् भगवान हयग्रीव की उपासना करनेवालों को नित्य ही उत्सव करना चाहिए। भगवान श्रीहरि ने श्रावण पूर्णिमा के दिन श्रवणा नक्षत्र में प्रकट होकर सर्वप्रथम सभी पापों का नाश करनेवाले सामवेद का गान किया।

## पौराणिक कथा :

इस अवतार से जुडी हुई एक और बात यह है कि, एक समय भगवान विष्णु और देवी लक्ष्मी वैकुंठ में विराजमान थे। उस समय देवी लक्ष्मी के सुंदर रूप को देखकर भगवान विष्णु मुस्कुराने लगे। इस समय देवी लक्ष्मी को ऐसा लगा की विष्णु भगवान उनके सौंदर्य की हंसी उडा रहे है। देवी ने उसे अपना अपमान समझ लिया और बिना सोचे समझे भगवान विष्णु को शाप दे दिया कि, ''आपका सर धड से अलग हो जाये।''

अब एक सवाल उठता है कि माता लक्ष्मीजी ने भगवान विष्णु को अपने धड से मस्तक दूर हो जाने का शाप क्यों दिया?

ये भी एक रहस्य की बात है, माता लक्ष्मी ने सोच समझकर ये शाप दिया था। हम आगे की कथा में देखते है की भगवान का सिर धड से अलग होना सबके उद्धार के लिए कितना जरूरी था।

## हयग्रीव असुर की तप साधना और वरदान प्राप्त करना

एक समय की बात है। हयग्रीव नामक एक परम पराक्रमी दैत्य था। उसने सरस्वती नदी के तट पर जाकर भगवती महामाया की प्रसन्नता के लिए बडी कठोर तपस्या की। बहुत दिनों तक निराहार से भगवती के भीजाक्षर महामंत्र का जाप करता रहा। उसकी इन्द्रियाँ उसके वश में हो चुकी थी। सभी लोगों का उसने त्याग कर दिया था। उसकी कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर भगवती ने उसे तामसी शक्ति के रूप में दर्शन दिया। भगवती महामाया ने उसे कहाँ, ''महाभाग्य! हमारी तपस्या सफल हुई। मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो भी इच्छा है मैं उसे पूर्ण करने के लिए तत्पर हूँ। वत्स! वर मांगो।''

भगवती की दया और प्रेम से ओतप्रोत वाणी सुनकर हयग्रीव असुर की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उसके नेत्र आनंद से छलक उठे। उसने भगवती महामाया की प्रसन्न वाणी में स्तुती करते हुए कहा की ''कल्याणमयी देवी! आपको नमस्कार है। आप महामाया है। सृष्टि स्थिति और संहार करना आपका स्वाभाविक गुण है। आपकी कृपा से कुछ भी असंभव नही है यदी आप मुझ पर प्रसन्न है, तो मुझे अमर होने का वरदान देनी की कृपा करे।''

देवी ने कहा! ''दैत्यराज! संसार में जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु निश्चित है। प्रकृति के इस विधान से कोई नहीं बच सकता। किसीका सदा के लिये अमर होना असंभव है। अगर देवताओं को भी पुण्य समाप्त होने पर मृत्युलोक में जाना पड़ता है। अतः तुम अमरत्व के अतिरिक्त और वर मांगो।'' हयग्रीव बोला ''अच्छा तो हयग्रीव के हाथों से ही मेरी मृत्यु हो। दूसरा मुझे मार न सके। मेरे मन की यही अभिलाषा है। आप उसे पूर्ण करने की कृपा करे।'' भगवती महामाया वरदान दे के अंतर्ध्यान हो गई।

## हयग्रीव असुर का सृष्टि पर अत्याचार

अब तो दुष्टात्मा हयग्रीव, महामाया के वरदान से अजेय हो गया। त्रिलोकी में कोई भी ऐसा नही था, जो उस दुष्ट को मार सके। उसने ब्रह्माजी से वेदों को छीन लिया और देवतागण, मुनिगण को सताने लगा। यज्ञ आदि कर्म बंध हो गये और सृष्टि की व्यवस्था बिगडने लगी। ब्रह्मादि देवता भगवान विष्णु के पास गया किन्तु वे योगनिद्रा में मग्न थे। उनके धनुष्य की डोर चडी हुई थी। ब्रह्माजी ने उनको जगाने के लिए वम्री नामक एक कीड़ा उत्पन्न किया। ''वम्री को बोला की तू विष्णु भगवान को नींद से जगा दे। वम्री ने उनके बदले

में कुछ माँगा। ब्रह्माजी ने यज्ञ भाग देने का वचन दिया। वचन के अनुसार यज्ञ कुंड के अलावा, यज्ञ कुंड के आस-पास में बिखरी हुई यज्ञ सामग्री वम्री नाम के कीडे को हिस्से में मिलती है। ब्रह्माजी की प्रेरणा से वम्री कीड़े ने धनुष्य की प्रत्यंचा काट दी। उस समय बडा भयंकर नाद हुआ और भगवान विष्णु का मस्तक कट कर अदृश्य हो गया।

सिर रहित श्री विष्णु को देखकर देवतागण दुःखी हुए सभी लोगों ने माँ भगवती की स्तुति की। माँ भगवती प्रकट हुई। उन्होंने कहा ''हे देवताओं! चिंता मत करो, मेरी कृपा से ही ऐसा हुआ है उसमें तुम्हारा सबका मंगल ही होगा। माँ जगदंबा ने कहा, ब्रह्माजी अश्व का मस्तक काट कर भगवान के धड से जोड दे इससे भगवान का हयग्रीवावतार होगा। आप उसी रूप से दुष्ट हयग्रीव दैत्य का वध करेंगे। ऐसा वचन देकर माँ भगवती अंतर्ध्यान हो गई।

## श्रीहरि का हयग्रीवावतार

माँ भगवती के कथनानुसार उसी क्षण ब्रह्माजी ने एक अश्व का मस्तक उतारकर भगवान के धड से जोड दिया। भगवती के कृपा से उसी क्षण भगवान विष्णु का हयग्रीवावतार हो गया। ये पवित्र दिवस था श्रावण मास की पूर्णिमा।

## दुष्ट हयग्रीव का संहार

श्रीहरि विष्णु ने हयग्रीव (घोड़े का मुखवाला) अवतार लिया, फिर हयग्रीव भगवान का हयग्रीव दैत्य के साथ महा भयानक युद्ध हुआ लंबे समय तक युद्ध चलता रहा, अंत में भगवान के हाथों राक्षस हयग्रीव की मृत्यु हुई। हयग्रीव को मारकर भगवान ने वेदों को ब्रह्माजी को पुनः समर्पित कर दिया और देवतागण-मुनिगण, ऋषिगण, मानव आदि का महा संकट का निवारण कर दिया। दर असल देवी लक्ष्मी का शाप और इस अवतार के पीछे भगवान विष्णु की ही माया थी, क्योंकि इस अवतार के जरीए भगवान विष्णु को बहुत बडा काम करना था।

## हयग्रीव अवतार लेने के कारण

यह अश्व अवतार याने के हयग्रीवावतार मानव जीवन में चमत्कार कर सकता है। हयग्रीव अश्व के रूप में भगवान विष्णु का दुर्लभ अवतार है यह अवतार उस समय हुआ था जब वेदों का प्रतिनिधित्व करता ज्ञान, राक्षसों द्वारा चोरी हो गया था हयग्रीव, राक्षसों से वेदों (ज्ञान की पुस्तके) को वापस लाने हेतु अवतरित हुए थे ये बात पौराणिक है। अर्थ यह है कि हयग्रीव (अश्व) बहाल करने वाले का प्रतिनिधित्व करते है, वह देव जो अज्ञानता के चुंगल से ज्ञान को बहाल करते है। वास्तव में हमें ये जन्मजयंती पर महा उत्सव करना चाहिए।

देवी सरस्वती के गुरु के रूप में, कला और विज्ञान के आकाशीय संरक्षक, भगवान विष्णु के यह अश्वमुख अवतार सभी प्रकार के ज्ञान और बुद्धिमत्ता पर शासन करते है। यह माना जाता है की भगवान विष्णु ने पवित्र वैदिक मंत्रों को अपने हयग्रीव रूप में संकलित किया था। जिसमें कुछ स्तोत्र अभी भी वैदिक यज्ञ अनुष्ठानों का अभिन्न अंग है।

## श्री हयग्रीव मंत्र का अनुष्ठान एवं पूजा अर्चना

सर्वोच्च ज्ञान के प्रतीक भगवान हयग्रीव की पूजा अर्चना करने से साधक को कई सारे लाभ प्राप्त होते हैं।

१) हमारी विचार क्षमता स्पष्ट बनती है।

२) हम अपनी समस्या को अच्छी तरह से समझ पाते है।

३) हमारी विश्लेषण व अंतर्ज्ञान क्षमता में वृद्धि होती है।

४) हमारी बुद्धि तीव्र बनती है तथा ज्ञान में वृद्धि होती है।

इसलिये हमे नीचे दिये गये मंत्र का अनुष्ठान जाप करना चाहिए।

*ज्ञानानंदमयं देवं निर्मलस्फटिकाकृतिम्।*
*आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे।।*

*ॐ वाणीश्वराया विद्महे हयग्रीव च धीमही।*
*तन्नोः हयग्रीव प्रचोदयात्।।*

हयग्रीव स्तोत्र का नित्य पठन भी ज्ञान में वृद्धि करता है।

विशेष में विद्या, ज्ञान और समृद्धि प्राप्त करने के लिये श्री लक्ष्मीहयग्रीव की उपासना अधिक फलदायी मानी जाती है और विद्यार्थीगण के लिए हयग्रीव यंत्र की पूजा विशेष लाभदायी है।

❖❖❖

# भगवती गायत्री मंत्र और जप अनुष्ठान

- श्री ज्योतिन्द्र के. अजवालीया
मोबाइल - ९६६४६९३०१३

भगवद प्राप्ति तथा भगवद अनुभव करने के लिए शास्त्रों में कई सारे प्रयोग बताये हैं, इस में से मंत्र जाप अनुष्ठान ही एक अकसिर प्रयोग है।

आज हम यहाँ गायत्री मंत्र अनुष्ठान के बारे में बात करेंगे। गायत्री मंत्र के माध्यम से हम भगवान तक पहुँच सकते है। साथ-साथ में माँ आद्यशक्ति गायत्री का भी विशेष परिचय लेने के बाद मंत्र जाप के बारे में अनुभव करेंगे।

## माँ आद्यशक्ति गायत्री

भगवती गायत्री आद्यशक्ति प्रकृति के पांच स्वरूपों में से एक मानी गयी है। इनका विग्रह तपाये हुए स्वर्ण के समान है। यही वेदमाता कहलाती है। किसी समय ये सविता (सूर्य) की पुत्री के रूप में अवतीर्ण हुई थी, इसलिये इनका नाम सावित्री पड़ा। इन्होंने ही (गयों) प्राणों का त्राण किया था, इसलिए भी इनका नाम गायत्री प्रसिद्ध हुआ।

गायत्री ज्ञान विज्ञान की मूर्ति है। गायत्री की उपासना, उनके मंत्र की उपासना तीनों कालों में की जाती है, प्रातः, मध्याह्न और सायं। प्रातःकाल ये सूर्य मंडल के मध्य में विराजमान रहती है, इस समय लाल रंग के वर्ण में अपने दोनों हाथों में क्रमशः अक्षसूत्र और कमंडल धारण करते है। ये कुमारी अवस्था में हंसवाहन पर विराजती है। ये स्वरूप ब्रह्मशक्ति गायत्री के नाम से प्रचलित है। इसका वर्णन ऋग्वेद में मिलता है। मध्यकाल में युवास्वरूप में ये सावित्री चारों भुजा में शंख, चक्र, गदा और पद्म के साथ गरुड वाहन पर विराजती है। ये वैष्णवी शक्ति का परिचारक है। इनका वर्णन यजुर्वेद में मिलता है। सायंकाल में गायत्री वृध्दावस्था स्वरूप में वृषभ वाहन पर निवास करके चारों हाथों में त्रिशूल, डमरु, पाश और पात्र धारण करती है। ये स्वरूप शुक्ल वर्ण है और रुद्र शक्ति का परिचारक है। इसका वर्णन सामवेद में मिलता है।

## गायत्रीमंत्र का माहात्म्य

जिस तरह पुष्पों का सार मधु, दूध का सार घृत है, उसी प्रकार गायत्रीमंत्र समस्त वेदों का सार है। गायत्री मंत्र से बढकर अन्य कोई मंत्र पृथ्वी पर नहीं है। गायत्री मंत्र ऋक्, यजु, साम, काण्व, कपिष्ठल, मैत्रायणी, तैत्तरिय आदि सभी वैदिक संहिताओं में प्राप्त है। सर्वत्र एक ही मंत्र है। इसमें चौबीस अक्षर है। मंत्र का मूल स्वरूप इस प्रकार है,

*तत्सवितुर्वरेण्यम भर्गो देवस्य धीमही धियो यो नः*
*प्रचोदयात्। (वाजसनेयी सं ३/३५)*

अर्थात् ''सृष्टिकर्ता प्रकाशमान परमात्मा के प्रसिद्ध तेज का ध्यान करते है, वे परमात्मा हमारी बुद्धि को सत की ओर प्रेरित करे।

## गायत्री मंत्र व उसका अर्थसंपादन

*'ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि*
*धियो यो नः प्रचोदयात्।'*

(ऋग्वेद ३.६२.१०; यजुर्वेद ३.३५, २२.९, ३०.२, ३६.३; सामवेद १४६२)

**भावार्थ :-** हम उस अविनाशी ईश्वर का ध्यान करते है, जो भूलोक, अंतरिक्ष और स्वर्ग लोकों का उत्पन्न किया है, उस सृष्टीकर्ता, पापनाशक, अतिश्रेष्ठ देव को हम धारण करते है - वह (ईश्वर) हमें सद्बुद्धी दें एवं सत्कर्म में प्रेरित करे।

यह गायत्री मंत्र ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद में प्रस्तुत है। एक ईश्वर का उपासना करना इसका मुख्य उद्देश्य है। चार वेदों में से यह मंत्र सबसे प्रसिद्ध मंत्र है।

'गायत्री' महामंत्र वेदों का एक महत्त्वपूर्ण मंत्र है जिसकी महत्ता ॐ के लगभग बराबर मानी जाती है। यह यजुर्वेद के मन्त्र 'ॐ भूर्भुवः स्वः' और ऋग्वेद के छन्द ३.६२.१० के मेल से बना है। इस मंत्र में सवितृ देव की उपासन है इसलिए इसे सावित्री भी कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि इस मंत्र के उच्चारण और इसे समझने से ईश्वर की प्राप्ति होती है। इसे श्री गायत्री देवी के स्त्री रूप में भी पूजा जाता है।

'गायत्री' एक छन्द भी है जो २४ मात्राओं ८+८+८ के योग से बना है। गायत्री ऋग्वेद के सात प्रसिद्ध छंदों में एक है। इन सात छंदों के नाम हैं - गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, विराट, त्रिष्टुप और जगती। गायत्री छन्द में आठ-आठ अक्षरों के तीन चरण होते हैं। ऋग्वेद के मंत्रों में त्रिष्टुप् को छोड़कर सबसे अधिक संख्या गायत्री छंदों की है। गायत्री के तीन पद होते हैं (त्रिपदा वै गायत्री)। अतएव जब छंद या वाक के रूप में सृष्टि के प्रतीक की कल्पना की जाने लगी तब इस विश्व को त्रिपदा गायत्री का स्वरूप माना गया। जब गायत्री के रूप में जीवन की प्रतीकात्मक व्याख्या होने लगी तब गायत्री छंद की बढ़ती हुई महिता के अनुरूप विशेष मंत्र की रचना हुई, जो इस प्रकार है :

*तत् सवितुर्वरेण्यं। भर्गोदेवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।* (ऋग्वेद ३, ६२, १०)

गायत्री ध्यानम्-

*मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील धवलच्छायैर्मुखस्त्रीक्षणै-*
*र्युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम्।*
*गायत्रीं वरदा-ऽभयः-ड्कुश-कशाः शुभ्रं कपालं गुण।*
*शंख, चक्रमथारविन्दुयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे।।*

अर्थात् मोती, मूंगा, सुवर्ण, नीलम् तथा हीरा इत्यादि रत्नों की तीक्ष्ण आभा से जिनका मुख मण्डल उल्लसित हो रहा है। चंद्रमा रूपी रत्न जिनके मुकुट में संलग्न हैं। जो आत्म तत्त्व का बोध कराने वाले वर्णों वाली हैं। जो वरद मुद्रा से युक्त अपने दोनों ओर के हाथों में अंकुश, अभय, चाबुक, कपाल, वीणा, शंख, चक्र, कमल धारण किए हुए हैं ऐसी गायत्री देवी का हम ध्यान करते हैं।

## मन्त्र जप के लाभ

गायत्री मन्त्र का नियमित रूप से सात बार जप करने से व्यक्ति के आसपास नकारात्मक शक्तियाँ बिलकुल नहीं आती।

जप से कई प्रकार के लाभ होते हैं, व्यक्ति का तेज बढ़ता है और मानसिक चिन्ताओं से मुक्ति मिलती है। बौद्धिक क्षमता और मेधाशक्ति यानी स्मरणशक्ति बढ़ती है।

गायत्री मंत्र में चौबीस अक्षर होते हैं, यह २४ अक्षर चौबीस शक्तियों-सिद्धियों के प्रतीक हैं। इसी कारण ऋषियों ने गायत्री मंत्र को सभी प्रकार की मनोकामना को पूर्ण करने वाला बताया है।

## गायत्री उपासना का विधि-विधान

गायत्री उपासना कभी भी, किसी भी स्थिति में की जा सकती है। हर स्थिति में यह लाभदायी है, परन्तु

विधिपूर्वक भावना से जुड़े न्यूनतम कर्मकाण्डों के साथ की गयी उपासना अति फलदायी मानी गयी है। तीन माला गायत्री मंत्र का जप आवश्यक माना गया है। शौच-स्नान से निवृत्त होकर नियत स्थान, नियत समय पर, सुखासन में बैठकर नित्य गायत्री उपासना की जानी चाहिए।

**उपासना का विधि-विधान इस प्रकार है -**

(१) **ब्रह्म सन्ध्या** - जो शरीर व मन को पवित्र बनाने के लिए की जाती है। इसके अन्तर्गत पांच कृत्य करने होते हैं।

(अ) **पवित्रीकरण** - बाएँ हाथ में जल लेकर उसे दाहिने हाथ से ढँक लें एवं मन्त्रोच्चारण के बाद जल को सिर तथा शरीर पर छिड़क लें।

*ॐ अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थांगतोऽपि वा।*
*यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।*
*ॐ पुनातु पुण्डरीकाक्षः पुनातु पुण्डरीकाक्षः पुनातु।*

(ब) **आचमन** - वाणी, मन व अन्तःकरण की शुद्धि के लिए चम्मच से तीन बार जल का आचमन करें। प्रत्येक मन्त्र के साथ एक आचमन किया जाए।

*ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।*
*ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा।*

(स) **शिखा स्पर्श एवं वन्दन** - शिखा के स्थान को स्पर्श करते हुए भावना करें कि गायत्री के इस प्रतीक के माध्यम से सदा सद्विचार ही यहाँ स्थापित रहेंगे। निम्न मंत्र का उच्चारण करें।

*ॐ चिद्रूपिणि महामाये, दिव्यतेजः समन्विते। तिष्ठ देवि शिखामध्ये, तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे।।*

(द) **प्राणायाम** - श्वास को धीमी गति से गहरी खींचकर रोकना व बाहर निकालना प्राणायाम के क्रम में आता है। श्वास खींचने के साथ भावना करें कि प्राण शक्ति, श्रेष्ठता श्वास के द्वारा अन्दर खींची जा रही है, छोड़ते समय यह भावना करें कि हमारे दुर्गुण, दुष्प्रवृत्तियाँ, बुरे विचार प्रश्वास के साथ बाहर निकल रहे हैं। प्राणायाम निम्न मन्त्र के उच्चारण के साथ किया जाए।

*ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः, ॐ जनः, ॐ तपः, ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं, ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ।*

(य) **न्यास** - इसका प्रयोजन है - शरीर के सभी महत्त्वपूर्ण अंगों में पवित्रता का समावेश तथा अन्तः की चेतना को जगाना ताकि देव-पूजन जैसा श्रेष्ठ कृत्य किया जा सके। बाएँ हाथ की हथेली में जल लेकर दाहिने हाथ की पांचों उँगलियों को उनमें भिगोकर बताए गए स्थान को मन्त्रोच्चार के साथ स्पर्श करें।

ॐ वाँ मे आस्येऽस्तु। (मुख को), ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु। (नासिका के दोनों छिद्रों को), ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु। (दोनों नेत्रों को), ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। (दोनों कानों को), ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु। (दोनों भुजाओं को), ॐ ऊर्वोमे ओजोऽस्तु। (दोनों जंघाओं को), ॐ अरिष्टानि मेऽगानि, तनूस्तन्वा मे सह सन्तु। (समस्त शरीर पर)।

आत्मशोधन की ब्रह्म संध्या के उपरोक्त पांचों कृत्यों का भाव यह है कि साधक में पवित्रता एवं प्रखरता की अभिवृद्धि हो तथा मलिनता-अवांछनीयता की निवृत्ति हो। पवित्र-प्रखर व्यक्ति ही भगवान के दरबार में प्रवेश के अधिकारी होते हैं।

(२) **देवपूजन** - गायत्री उपासना का आधार केन्द्र महाप्रज्ञा-ऋतम्भरा गायत्री है। उनका प्रतीक चित्र सुसज्जित पूजा की वेदी पर स्थापित कर उनका निम्न मंत्र के माध्यम से आवाहन करें। भावना करें कि साधक की प्रार्थना के अनुरूप माँ गायत्री की शक्ति वहाँ अवतरित हो, स्थापित हो रही है।

*ॐ आयातु वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि।*
*गायत्रिच्छन्दसां मातः! ब्रह्मयोने नमोऽस्तु ते।।*

*ॐ श्री गायत्र्यै नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि, ततो नमस्कारं करोमि।*

**(ख) गुरु -** गुरु परमात्मा की दिव्य चेतना का अंश है, जो साधक का मार्गदर्शन करता है। सद्गुरु के रूप में पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी का अभिवन्दन करते हुए उपासना की सफलता हेतु गुरु आवाहन निम्न मंत्रोच्चारण के साथ करें।

*ॐ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः, गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरुदेव परब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे नमः।। अखण्डमंडलाकारं, व्याप्तं येन चराचरम्। तत्पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः।। ॐ श्रीगुरवे नमः, आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि।*

(ग) माँ गायत्री व गुरु सत्ता के आवाहन व नमन के पश्चात् देवपूजन में घनिष्ठता स्थापित करने हेतु पंचोपचार द्वारा पूजन किया जाता है। इन्हें विधिवत् सम्पन्न करें। जल, अक्षत, पुष्प, धूप-दीप तथा नैवेद्य प्रतीक के रूप में आराध्य के समक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। एक-एक करके छोटी तश्तरी में इन पांचों को समर्पित करते चलें। जल का अर्थ है - नम्रता-सहृदयता। अक्षत का अर्थ है - समयदान अंशदान। पुष्प का अर्थ है - प्रसन्नता-आन्तरिक उल्लास। धूप-दीप का अर्थ है- सुगन्ध व प्रकाश का वितरण, पुण्य-परमार्थ तथा नैवेद्य का अर्थ है - स्वभाव व व्यवहार में मधुरता-शालीनता का समावेश।

ये पांचों उपचार व्यक्तित्त्व को सत्प्रवृत्तियों से सम्पन्न करने के लिए किये जाते हैं। कर्मकाण्ड के पीछे भावना महत्त्वपूर्ण है।

**(३) जप -** गायत्री मंत्र का जप न्यूनतम तीन माला अर्थात् घड़ी से प्रायः पंद्रह मिनट नियमित रूप से किया जाए। अधिक बन पड़े, तो अधिक उत्तम। होठ हिलते रहें, किन्तु आवाज इतनी मन्द हो कि पास बैठे व्यक्ति भी सुन न सकें। जप प्रक्रिया कषाय-कल्मषों-कुसंस्कारों को धोने के लिए की जाती है।

*ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धीयो यो नः प्रचोदयात्।*

इस प्रकार मंत्र का उच्चारण करते हुए माला की जाय एवं भावना की जाय कि हम निरन्तर पवित्र हो रहे हैं। दुर्बुद्धि की जगह सद्बुद्धि की स्थापना हो रही है।

**(४) ध्यान -** जप तो अंग-अवयव करते हैं, मन को ध्यान में नियोजित करना होता है। साकार ध्यान में गायत्री माता के अंचल की छाया में बैठने तथा उनका दुलार भरा प्यार अनवरत रूप से प्राप्त होने की भावना की जाती है। निराकार ध्यान में गायत्री के देवता सविता की प्रभातकालीन स्वर्णिम किरणों को शरीर पर बरसने व शरीर में श्रद्धा-प्रज्ञा-निष्ठा रूपी अनुदान उतरने की भावना की जाती है, जप और ध्यान के समन्वय से ही चित्त एकाग्र होता है और आत्मसत्ता पर उस क्रिया का महत्वपूर्ण प्रभाव भी पड़ता है।

**(५) सूर्याघ्र्यदान -** विसर्जन-जप समाप्ति के पश्चात् पूजा वेदी पर रखे छोटे कलश का जल सूर्य की दिशा में अर्घ्य रूप में निम्न मंत्र के उच्चारण के साथ चढ़ाया जाता है।

*ॐ सूर्यदेव! सहस्रांशो, तेजोराशे जगत्पते। अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर।। ॐ सूर्याय नमः, आदित्याय नमः, भास्कराय नमः।।*

भावना यह करें कि जल आत्म सत्ता का प्रतीक है एवं सूर्य विराट् ब्रह्म का तथा हमारी सत्ता-सम्पदा समिष्टि के लिए समर्पित-विसर्जित हो रही है।

इतना सब करने के बाद पूजा स्थल पर देवताओं को करबद्ध नतमस्तक हो नमस्कार किया जाए व सब वस्तुओं को समेटकर यथास्थान रख दिया जाए। जप के लिए माला तुलसी या चन्दन की ही लेनी चाहिए। सूर्योदय से दो घण्टे पूर्व से सूर्यास्त के एक घण्टे बाद तक कभी भी गायत्री उपासना की जा सकती है। मौन-मानसिक जप चौबीस घण्टे किया जा सकता है। माला जपते समय तर्जनी उंगली का उपयोग न करें तथा सुमेरु का उल्लंघन न करें।

इस तरह गायत्री मंत्र से जिवात्मा प्रभु के अधिकारी बन सकते हैं।

❖❖❖

# श्री पेरियवाच्चान पिळ्ळै

- श्रीमती अनिता . रमाकांत दरक
मोबाइल - ९४४९१८३६११

**तिरुनक्षत्र :** श्रावण मास, रोहिणि नक्षत्र

**अवतार स्थल :** सेंगनूर

**आचार्य :** नम्पिळ्ळै

**शिष्य :** नायनाराचान पिळ्ळै, वादि केसरि अळगिय मणवाळ जीयर, परकाल दास इत्यादि

पेरियवाच्चान पिळ्ळै, सेंगणूर में, श्री यामुन स्वामीजी के पुत्र ''श्रीकृष्ण'' के रूप में अवतरित हुए और पेरियवाच्चान पिळ्ळै के नाम से प्रसिद्ध हुए। श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी के प्रधान शिष्यों में से वे एक थे और उन्होंने सभी शास्त्रार्थों का अध्ययन किया। श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी के अनुग्रह से पेरियवाच्चान पिळ्ळै सम्प्रदाय में एक प्रसिद्ध आचार्य बने।

पेरिय तिरुमोळि ७. १०. १० कहता है कि- तिरुक्कण्णमंगै एम्पेरुमान की इच्छा थी कि वे श्रीपरकाल स्वामीजी के पाशुरों का अर्थ उन्हीं से सुने। अतः इसी कारण, कलियन श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी बनके अवतार लिए और भगवान पेरियवाच्चान पिळ्ळै का अवतार लिए ताकि अरुलिचेयळ के अर्थ सीख सके। पेरियवाच्चान पिळ्ळै व्याख्यान चक्रवर्ति, अभय प्रदराजर इत्यादि नामों से भी जाने जाते हैं। पूर्वाचार्यों के अनुसार, उन्होंने नायनाराचान पिळ्ळै को दत्तक लिया था।

इनके जीवित काल में, इन्होंने निम्न लिखित ग्रंथों की व्याख्या किया है :

१) ४००० दिव्यप्रबन्ध - आप श्रीमान ने हर एक अरुळिचेयळ की व्याख्या लिखी है। लेकिन पेरियाळवार तिरुमोळि के लग भग ४०० पाशुर नष्ट होने से, श्रीवरवर मुनि स्वामीजी ने सिर्फ उन पाशुरों की व्याख्या लिखे।

२) स्तोत्र ग्रन्थ - पूर्वाचार्य के श्री सूक्ति जैसे स्तोत्र रत्न, चतुःश्लोकी, गद्य त्रय इत्यादि और जितने स्तोत्र पर व्याख्यान लिखा।

३) श्री रामायण - श्री रामायण के कुछ मुख्य श्लोकों का चयनित कर विस्तार से विवरण किया। विभीषण शरणागति के वृत्तान्त के विवरण के लिए इन्हें अभय प्रदराजर करके गौरवान्वित किया गया था।

४) इन्होंने कई रहस्य ग्रंथ जैसे माणिक्क मालै, परंत रहस्य, सकल प्रमाण तात्पर्य इत्यादि (जो रहस्य त्रय से प्रतिपादित विषयों को अद्भुत रूप से समझाती है) कि रचना की। रहस्य त्रय को लिखित प्रमाण करने में आप श्री सर्वप्रथम हैं। श्रीपिळ्ळै लोकाचार्य ने श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी और पेरियवाच्चान पिळ्ळै के उपदेशों के अनुसार अपना अष्टादश रहस्य ग्रंथों की रचना किये है।

इनकी अरुळिचेयळ और श्री रामायण में निपुणता का प्रमाण इनसे लिखे गए पाशुरपड़ि रामायण ही है जिसमें वे केवल अरुळिचेयळ के शब्द उपयोग से पूरे श्री रामायण का विवरण सरल रूप में प्रस्तुत किया है।

वादि केसरि अळगिय मणवाळ जीयर के वृत्तांत से हमें इनकी अनुग्रह का महत्व जानने को मिलता है। अपने पूर्वाश्रम में जीयर पेरियवाच्चान पिळ्ळै के रसोई (तिरुमडपळ्ळि) में सेवा करते थे। वे अनपढ़ थे लेकिन अपने

आचार्य के प्रति अपार भक्ति था। वेदांत विषय के बारे में कुछ श्रीवैष्णव चर्चा करते समय, चर्चा की विषय के बारे में इन्होंने पूछ-ताछ की। इन्हें अनपढ और गवार समझके उन्होंने घमंड से जवाब दिया की ''मुसला किसलयम्'' (नव खिला लोढ़ा) नामक ग्रंथ के बारे में चर्चा कर रहे हैं। अपने आचार्य के पास जाके घटित संघठन को सुनाते हैं और पेरिचवाच्चान पिळ्ळै दया करते हुए निश्चित करते हैं कि उन्हें सब कुछ सिखायेंगे। थोड़े साल बाद, शास्त्र के विद्वान, वादि केसरी अळगिय मणवाळ जीयर बनके सम्प्रदाय के कई ग्रंथों कि रचना की।

जैसे पेरिय पेरुमाळ, पेरिय पिराट्टि, पेरिय तिरुवडि, पेरियाळवार और पेरिय कोयिल, आच्चान पिळ्ळै भी अपनी महानता के कारण पेरियवाच्चान पिळ्ळै नाम से प्रसिद्ध हुए।

पेरियवाच्चान पिळ्ळै के लिए अपने उपदेश रत्न माला में श्रीवरवरमुनि स्वामीजी २ पाशुर समर्पित करते हुए कहते हैं -

**पाशुर : ४३**

*नम्पिळ्ळै तम्मुडैय नल्लरुळाल् एविविडप्*
*पिन् पेरियवाच्चान पिळ्ळै अतनाल्*
*इन्बा वरुबति मारन् मरैप् पोरुळै चोन्नतु*
*इरुपतु नालायिरम्*

**सरल अनुवाद :** अपने कारुण्य से श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी ने पेरियवाच्चान पिळ्ळै को तिरुवाय मोळि का व्याख्यान लिखने का आदेश दिया। उसे ध्यान में रखते हुए वेद का सार तिरुवाय मोळि का अत्यन्त मनोरंजनीय व्याख्यान पेरियवाच्चान पिळ्ळै ने रचना किया। यह व्याख्यान श्री रामायण (२४००० श्लोक) की तरह २४००० पड़ि से रची गई।

पाशुर : ४६

*पेरियवाच्चान पिळ्ळै पिन्बुळ्ळवैक्कुम्*
*तेरिय व्याकियैगळ् चेय्वाल्*
*अरिय अरुळिच्चेयल् पोरुळै आरियर्गट्किप्पोतु*
*अरुळिच्चेयलाय्त् तरिण्तु*

**सरल अनुवाद :** पेरियवाच्चान पिळ्ळै की अरुळिचेयल व्याख्यान से ही, महान आचार्य पुरुष अरुळिचेयळ का अर्थ समझकर अरुळिचेयळ के सही अर्थों का प्रचार कर रहे हैं। इनके व्याख्यान के बिना, अरुळिचेयळ के निगूढ़ अर्थों की चर्चा भी नहीं कर सकेगा।

मामुनिगळ, अपने पाशुर ३९ में आप श्रीमान की गणना तिरुवाय्मोळि के पांच व्याख्यान करते हुए कहते हैं - आप श्रीमान ने स्वयं अपने ग्रंथ का संरक्षण किया और तत्पश्चात इसी का प्रचार और प्रसार भी किया। क्योंकि इसके बिना अरुळिचेयळ के निगूढ़ अर्थों को समझना असम्भव है।

वार्तामाला ग्रन्थ पूर्वाचार्य के ग्रंथों में इनके जीवन के अनेक घटनाओं के बारे में प्रस्ताव किया गया है। आईये इनमें से कुछ अब देखेंगे :

१) किसी ने इनसे पूछा ''क्या हम एम्पेरुमान की कृपा के पात्र हैं या लीला के पात्र हैं?''- पेरियवाच्चान पिळ्ळै जवाब देते हैं - ''अगर हम सोचेंगे कि हम इस संसार में फसें हैं तो एम्पेरुमान की कृपा के पात्र हैं और अगर हम सोचेंगे कि हम इस संसार में खुश हैं तो एम्पेरुमान की लीला के पात्र हैं।''

२) जब पारतंत्रिय का मतलब किसी ने पूछा तब पेरियावाच्चान पिळ्ळै जवाब देते हैं कि एम्पेरुमान की शक्ति पर निर्भर होकर, सभी उपायान्तर (स्वयं प्रयास के साथ) को छोड़े और भगवत कैंकर्य मोक्ष के लिए तड़प रहे तो उसे पारतंत्रिय कहा जाता है।

३) किसी ने पूछा - स्वामी, उपाय क्या है? क्या उपाय मतलब सब कुछ छोड़ देना होता है या उन्हें पकड़ लेना होता है? तब पेरियवाच्चान पिळ्ळै जवाब देते हैं कि उपरोक्त दोनों भी उपाय नहीं है। एम्पेरुमान ही हैं जो हमे सभी विषयों से छुड़ाकर उन्हें ही पकड लेने का ज्ञान दे रहे हैं। इसलिए एम्पेरुमान ही उपाय हैं।

४) पेरियवाच्चान पिळ्ळै के एक रिश्तेदार चिंतित थी और जब चिंता का कारण पूछा गया तो वह जवाब देती है कि न जाने कितने समय से इस संसार में वास कर रही हूँ और बहुत कर्म इक्कट्ठा कर चुकी हूँ ऐसे में एम्पेरुमान कैसे मोक्ष प्रसाद करेंगे। इसके लिए पेरियवाच्चान पिळ्ळै जवाब देते हैं कि हम एम्पेरुमान के वस्तु हैं और बिना किसी कर्म का लिहाल किए वह हमें ले जायेंगे।

५) जब एक श्रीवैष्णव दूसरे श्रीवैष्णव के दोषों को देख रहा है, तब पेरियवाच्चान पिळ्ळै कहते हैं कि यमराज अपने सेवक से श्रीवैष्णव के दोषों को ना देखकर उनसे दूर जाने का आदेश देते हैं, देवीजी कहती हैं ''न कश्चिन् न अपराध्यति'' - दूसरों के दोषों को ना देखो। भगवान कहते हैं अगर मेरे भक्त गलती करते हैं वह अच्छे के लिए ही है, आळवार कहते हैं जो कोई भी भगवान के भक्त हैं, वह कीर्तनीय हैं। पेरियवाच्चान पिळ्ळै व्यंग्य रूप से कहते हैं कि अगर किसी को श्रीवैष्णव के दोष की गिनती करनी ही है तो वह अनामक व्यक्ति यही (जो श्रीवैष्णव दूसरे श्रीवैष्णव के दोष गण रहा हैं) हो।

६) भागवत (भगवत भक्त) चर्चा के दौरान, किसी ने एम्पेरुमान के बारे में स्तुति की, तब पेरियवाच्चान पिळ्ळै कहते हैं विशेष विषय के बारे में चर्चा करते समय क्यों सामान्य विषय की चर्चा करे। पेरियवाच्चान पिळ्ळै कहते हैं हर श्रीवैष्णव को अरुळिचेयळ इत्यादि में भाग लेना चाहिए।

## पेरियवाच्चान पिळ्ळै तनियन

*श्रीमत् कृष्ण समाह्वाय नमो यामुन सूनवे।*

*यत् कटाक्षैक लक्ष्याणम् सुलभः श्रीधरस् सदा।।*

मैं पेरियवाच्चान पिळ्ळै को प्रार्थना कर रहा हूँ जो यामुनर के पुत्र हैं और जिनके कटाक्ष से एम्पेरुमान श्रीमन्नारायण का अनुग्रह सुलभ से मिल सकता है।

उनके श्रीचरण कमल को प्रणाम करके, अपने संप्रदाय में उनका योगदान हमेशा याद रखे।

❖❖❖

**तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।**

## लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक ध्रुवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं को निम्न पते पर भेजिए-

**प्रधान संपादक,**
**सप्तगिरि कार्यालय,**
**ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,**
**तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।**

गतांक से

# श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

उणर्न्द मेय्ज्ञानियर् योगन्तोरुम्, तिरुवाय् मोळियिन्
मणन्तरु मिन्निशै मन्नु मिडन्तोरुम्, मामलराळ्
पुणर्न्द पोन्मार्पन् पोरुन्दुम् पदितोरुम् पुक्कुनिर्कुम्
कुणन्तिहळ् कोण्डळ्, इरामानुजनेंकुलक्कोळुन्दे ॥६०॥

आत्मगुणनिधिर्महोदारोऽस्मत्कुलनाथश्च भगवान् रामानुजः तत्त्वविदां गोष्ठीषु, द्रमिडोपनिषद्दिव्यसूक्तिसौरभाढ्यस्थलेषु, पद्मासमाश्लिष्टवक्षसो भगवतो दिव्यदेशेषु च युगपद्विराजते॥

आत्मगुणों से परिपूर्ण व उज्वल, कालमेघ के समान परमोदार, हमारे कुलकूटस्थ श्रीरामानुज स्वामीजी तत्त्वज्ञानियों की प्रत्येक गोष्ठी में, सहस्रगीति (प्रभृति दिव्यप्रबंधों) की दिव्य सूक्ति की सुगंध से वासित प्रत्येक स्थल में एवं लक्ष्मीजी से आलिंगित श्रीवक्षवाले भगवान के एकैक दिव्यदेश में भी विराजते हैं।

क्रमशः

# श्रीसङ्कष्टनाशनगणेशस्तोत्रम्

## नारद उवाच

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्।
भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुष्कामार्थसिद्धये ॥१॥

प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम् ॥२॥

लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम् ॥३॥

नवमं फालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ॥४॥

द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं परम् ॥५॥

विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्।
पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥६॥

जपेद्गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासैः फलं लभेत्।
संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ॥७॥

अष्टानां ब्राह्मणानां च लिखित्वा यः समर्पयेत्।
तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ॥८॥

इति श्रीनारदपुराणे सङ्कष्टनाशन गणेशस्तोत्रम् सम्पूर्णम्।

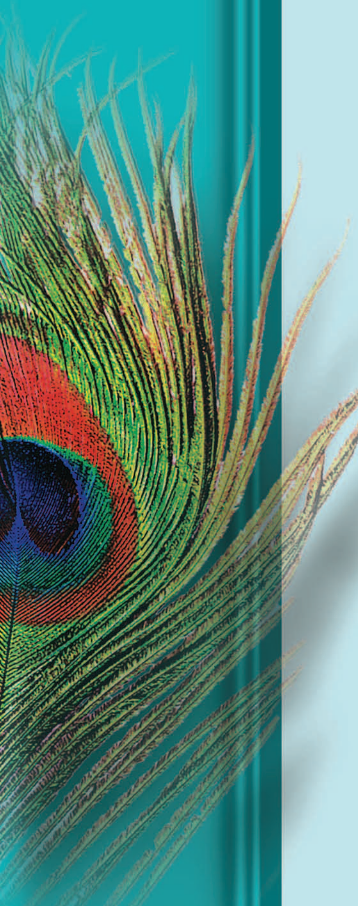

# श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामावलिः

ओं श्रीकृष्णाय नमः
ओं कमलानाथाय नमः
ओं वासुदेवाय नमः
ओं सनातनाय नमः
ओं वसुदेवात्मजाय नमः
ओं पुण्याय नमः
ओं लीलामानुषविग्रहाय नमः
ओं श्रीवत्सकौस्तुभधराय नमः
ओं यशोदावत्सलाय नमः
ओं हरये नमः १०
ओं चतुर्भुजात्तचक्रासिगदाशङ्खाद्यायुधाय नमः
ओं देवकीनन्दनाय नमः
ओं श्रीशाय नमः
ओं नन्दगोप प्रियात्मजाय नमः
ओं यमुनावेगसंहारिणे नमः
ओं बलभद्र प्रियानुजाय नमः
ओं पूतनाजीवितहराय नमः
ओं शकटासुरभञ्जनाय नमः
ओं नन्दव्रजजनानन्दिने नमः
ओं सच्चिदानन्दविग्रहाय नमः २०
ओं नवनीतविलिप्ताङ्गाय नमः
ओं नवनीतनटाय नमः
ओं अनघाय नमः
ओं नवनीतनवाहारिणे नमः
ओं मुचुकुन्दप्रसादकाय नमः
ओं षोडशस्त्रीसहस्रेशाय नमः
ओं त्रिभङ्गिने नमः
ओं मधुराकृतये नमः
ओं शुकवागमृताब्धीन्दवे नमः
ओं गोविन्दाय नमः ३०
ओं योगिनाम्पतये नमः
ओं वत्सवाटचराय नमः
ओं अनन्ताय नमः

ओं धेनुकासुरभञ्जनाय नमः
ओं तृणीकृततृणावर्ताय नमः
ओं यमलार्जुनभञ्जनाय नमः
ओं उत्तालतालभेत्रे नमः
ओं गोपगोपीश्वराय नमः
ओं योगिने नमः
ओं कोटिसूर्यसमप्रभाय नमः ४०
ओं इलापतये नमः
ओं परञ्ज्योतिषे नमः
ओं यादवेन्द्राय नमः
ओं यदूद्वहाय नमः
ओं वनमालिने नमः
ओं पीतवासिने नमः
ओं पारिजातापहारकाय नमः
ओं गोवर्धनाचलोद्धर्त्रे नमः
ओं गोपालाय नमः
ओं सर्वपालकाय नमः ५०
ओं अजाय नमः
ओं निरञ्जनाय नमः
ओं कामजनकाय नमः
ओं कञ्जलोचनाय नमः
ओं मधुघ्ने नमः
ओं मधुरानाथाय नमः
ओं द्वारकानायकाय नमः
ओं बलिने नमः
ओं बृन्दावनान्तसञ्चारिणे नमः
ओं तुलसीदामभूषणाय नमः ६०
ओं स्यमन्तकमणिहर्त्रे नमः
ओं नरनारायणात्मकाय नमः
ओं कुब्जाकृष्णाम्बरधराय नमः
ओं मायिने नमः
ओं परमपुरुषाय नमः
ओं मुष्टिकासुरचाणूरमल्लयुद्धविशारदाय नमः

ओं संसारवैरिणे नमः
ओं कंसारये नमः
ओं मुरारये नमः
ओं नरकान्तकाय नमः ७०
ओं अनादिब्रह्मचारिणे नमः
ओं कृष्णाव्यसनकर्शकाय नमः
ओं शिशुपालशिरच्छेत्रे नमः
ओं दुर्योधनकुलान्तकाय नमः
ओं विदुराक्रूरवरदाय नमः
ओं विश्वरूपप्रदर्शकाय नमः
ओं सत्यवाचे नमः
ओं सत्यसङ्कल्पाय नमः
ओं सत्यभामारताय नमः
ओं जयिने नमः ८०
ओं सुभद्रापूर्वजाय नमः
ओं विष्णवे नमः
ओं भीष्ममुक्तिप्रदायकाय नमः
ओं जगद्गुरवे नमः
ओं जगन्नाथाय नमः
ओं वेणुनादविशारदाय नमः
ओं वृषभासुरविध्वंसिने नमः
ओं बाणासुरकरान्तकाय नमः
ओं युधिष्टिरप्रतिष्ठात्रे नमः
ओं बर्हिबर्हावसंतकाय नमः ९०
ओं पार्थसारथिये नमः
ओं अव्यक्ताय नमः
ओं गीतामृतमहोदधये नमः
ओं कालीयफणिमाणिक्यरञ्जित
श्रीपदाम्बुजाय नमः
ओं दामोदराय नमः
ओं यज्ञभोक्त्रे नमः
ओं दानवेन्द्रविनाशकाय नमः
ओं नारायणाय नमः
ओं परब्रह्मणे नमः
ओं पन्नगाशनवाहनाय नमः १००
ओं जलक्रीडासमासक्तगोपी
वस्त्रापहारकाय नमः
ओं पुण्यश्लोकाय नमः
ओं तीर्थपादाय नमः
ओं वेदवेद्याय नमः
ओं दयानिधये नमः
ओं सर्वतीर्थात्मकाय नमः
ओं सर्वग्रहरूपिणे नमः
ओं परात्पराय नमः १०८

इति श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामावलिः सम्पूर्णम्।

दि. २५-०७-२०२१ को चातुर्मास्य व्रत दीक्षा को स्वीकारते हुए श्रीश्रीश्री बडा जीयर स्वामीजी, श्रीश्रीश्री छोटे जीयर स्वामीजियों को फल देते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस.,। इस कार्यक्रम में ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस., व अन्य उच्च पदाधिकारिगण ने भाग लिया। इस संदर्भ में दोनों जीयर स्वामीजी भगवान जी को दर्शन किया गया दृश्य।

२०२१, जुलाई १६ से २४ तक तिरुचानूर स्थित श्री पद्मावती देवी के मंदिर में शास्त्रोक्त रूप में संपन्न 'कनकांबर सहित कोटि मल्लेल पुष्प महायाग' में भाग लेते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., और ति.ति.दे. मुख्य सतर्कता और सुरक्षा अधिकारी श्री गोपिनाथ जेट्टी, आई.पी.एस.,।

तिरुमल में संपन्न सुंदरकांड पारायण के दृश्य।

दि. २५-०७-२०२१ को अप्पलायगुंटा में स्थित उभयदेवेरियों सहित श्री प्रसन्नवेंकटेश्वरस्वामीजी को संपन्न पुष्पयाग महोत्सव के दृश्य। इस संदर्भ में ति.ति.दे.संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारिणी श्रीमती सदा भार्गवी आई.ए.एस., ने भाग लिया।

# उडुपि श्रीकृष्ण मंदिर

- डॉ.एच.एन.गौरी राव, मोबाइल - ९७४२५८२०००

सारे विश्व में कृष्ण के अनेक मंदिर हैं, परन्तु कर्नाटका के 'उडुपी कृष्ण' मठ जैसा अद्भुत मंदिर कहीं भी देखने को नहीं मिलता। इस क्षेत्र के नाम से लेकर श्रीकृष्ण की लीलाओं तक हर विषय में विशिष्टताएँ दिखाई पड़ती हैं। यहाँ के श्रीकृष्ण का सीधा संबंध द्वारका से है। यह मंदिर परशुराम क्षेत्र के सात मुक्तिस्थलों में से एक है। श्रीकृष्ण की सुंदरता के समान यहाँ कि प्रकृति भी अति सुंदर है। एक ओर सीता, सुवर्णा नदियाँ, दूसरी ओर अरबी समुद्र, उनके बीच बड़े-बड़े पर्वत, आकाश को छूने वाले वृक्ष और मन को आह्लादित करती है। प्रकृति की रमणीयता के बीच श्रीकृष्ण की आध्यात्मिक ज्योति चमकती दिखाई पड़ती है। उडुपी 'मंदिरों का शहर' नाम से तथा कृष्ण मठ (मंदिर) 'दक्षिण भारत का मथुरा' नाम से विख्यात है। आगे जानेंगे उडुपी के कृष्ण मंदिर से संबंधित जानकारी।

## 'उडुपी' नाम - चंद्र को मिली शाप से मुक्ति :

संस्कृत में 'उडु' का अर्थ है 'नक्षत्र'; 'पा' का अर्थ है 'अधिपति'। तारों का अधिपति चंद्र है। 'उडुपा' बाद में 'उड़पी' बन गया। 'उडुपी' नाम को लेकर भी एक किंबदंती प्रचलित है। स्थल पुराण के अनुसार राकापति चंद्र ने दक्षप्रजापति की सब कन्याओं से शादी की। परंतु उन्हें रोहिणी के प्रति अधिक प्रेम था। इससे असन्तुष्ट अन्य कन्याओं ने दक्षप्रजापति को सारा वृत्तांत सुनाया। इससे कुपित दक्षप्रजापति ने चंद्र को क्षय (कलाविहीन) होने का शाप दिया। बाद में चंद्र ने उडुपी क्षेत्र में चंद्रपुष्करी सरोवर में भगवान शिव की तपस्या की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर महाशिव ने उन्हें शाप मुक्त किया। तब से चंद्र से प्रतिष्ठित शिव मंदिर 'चंद्रमौलीश्वर मंदिर' कहा गया, और इस क्षेत्र का नाम पड़ा 'उडुपी।'

## पौराणिक तथा ऐतिहासिक गाथा - द्वारका से आया कृष्ण कन्हैया :

उडुपी कृष्ण से संबंधित यह पौराणिक गाथा द्वापर युग से संबंधित है। एक बार द्वारका में देवकी ने श्रीकृष्ण से यह मांगा कि जिस प्रकार यशोदा ने बालकृष्ण की लीलाओं का आनंद प्राप्त किया है, वह भी उस परमानंद को प्राप्त करना चाहती है। देवकी की इच्छा को पूर्ण करने के लिए बलराम और स्वयं कृष्ण दोनों छोटे बालक बन गए और मन लुभानेवाले बाल लीलाओं से देवकी को सम्मोहित किया। रुक्मिणी तथा यशोधा ने भी इन लीलाओं का पूर्ण आनंद प्राप्त किया। माखनचोर कृष्ण कन्हैया

मखानी और रस्सी को लेकर भाग रहे थे। श्रीकृष्ण और बलराम के नन्हे बालकों के रूप को मूर्त रूप देने के लिए रुक्मिणी ने विश्वकर्मा से मांगा। विश्वकर्मा ने रुक्मिणी की इच्छा के अनुसार कृष्ण और बलराम की सुंदर मूर्तियों को बनाया। जब द्वापर युग के अंत में द्वारका समुद्र में डूबनेवाला था तब रुक्मिणी ने इन दोनों मूर्तियों को गोपीचंदन में रख दिया था।

चारित्रिक आधार के अनुसार इस घटना के सैकड़ों वर्षों के बाद १३वीं सदी में एक नाव द्वारका से उडुपी को समुद्र मार्ग से आ रहा था। वह नाव उडुपी के मल्पे तीर तक आते-आते खराब मौसम के कारण डूबने के खतरे में था। मध्वाचार्य, जो उस समय समुद्र तीर पर संध्यावंदना करते थे, खतरे में घिरे उस नाव को देखकर अपने तपोबल से नाव को बचाया। नाविक तथा अन्य यात्रियों ने नाव से नीचे उतरकर मध्वाचार्य को प्रणाम किया और किसी बहुमूल्य चीज को नाव से लेने की प्रार्थना की। मध्वाचार्य ने नाव में रहे दो गोपीचंदनों को मांगा। तब नाविक आश्चर्य से उस नाव में ढूंढके दो गोपीचंदनों को मध्वाचार्य को उपहार के रूप में दिया और कुतूहलपूर्वक उनके महत्व के बारे में पूछा।

मध्वाचार्य ने उन दोनों गोपीचंदनों को पानी से धोया तब उनमें से बालकृष्ण और बलराम की प्रतिमाएँ निकली। मध्वाचार्य से बलराम की मूर्ति को वही प्रतिष्ठा किया गया। श्रीकृष्ण की मूर्ति को विलंबी नाम वर्ष माघ शुक्ल तदिया १२३६ सदी में पवित्र संक्रांति के दिन उडुपी में प्रतिष्ठित किया। आगे चलकर यही मंदिर (मठ) वैष्णव मंदिरों में एक प्रसिद्ध पवित्रधाम बना।

## कनकन किंडी-खिड़की से होता है श्रीकृष्ण का दर्शन :

अपने दर्शन के लिए तरसनेवाले भक्त के लिए दिशा बदलकर खड़े हो गये है स्वामी। एक किंवदंती के अनुसर १६वीं शताब्दि, यतिवरेण्य वादिराजा के समय में, कनकदास नामक श्रीकृष्ण का परमभक्त था, जो यतिवरेण्य व्यासराजा के अनुयायी थे। वे एक अच्छे कवि और गायक भी थे; श्रीकृष्ण की सेवा करना चाहते थे। परंतु वे निम्न कुल के होने से तत्कालीन रूढियों से ग्रसित अग्र वर्ण के लोगों ने उन्हें अंदर नहीं आने दिया। इससे कनकदास मंदिर के पीछे जाकर भगवान के दर्शन के लिए अनेक रीतियों से प्रार्थना की। वे गाये थे-

*''बागिलनु तेरेदु सेवयनु कोडो हरिये।*
*कूगिदरु धनि केललिल्लवे नरहरिये।''*

अर्थात् - 'हे हरि! आपकी सेवा के लिए द्वार खोलदो, पुकारने पर भी ध्वनि सुनाई नहीं दिया? हे, नरहरि।'

गजेंद्र, प्रह्लाद, अजमिलन आदि के दृष्टान्तों को देते हुए गाते हैं- 'उनको तुमने मोक्ष दिया', 'हे भक्तवत्सल! मुझे भी आपकी सेवा करने का मौका दो'। उनकी इस भक्ति से प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण ने कनकदास के सामने अर्थात् पूर्वी दिशा से पश्चिम की ओर मुड़ा; तत् क्षण वहाँ का द्वार टूट गया और कनकदास को श्रीकृष्ण का दर्शन हुआ। बाद में उस टूटे द्वार की जगह पर नौ छेदोंवाली चांदी की एक खिड़की बनवायी गयी, जो 'कनकन किंडी' या 'नवग्रह किंडी'' कहा जाता हैं। जहाँ कनकदास खड़े थे, उसी जगह पर आज कनक मंडप दिखाई पड़ता है। बाद में इस खिड़की से श्रीकृष्ण का दर्शन करना एक परंपरा बन गयी। आज भी इसी खिड़की के द्वारा भक्तों को कन्हैया का दर्शन भाग्य प्राप्त होता है।

## मध्वाचार्य और अष्ट मठ :

मध्वाचार्य का जन्म पाजका क्षेत्र में हुआ था। वे बाल्यावस्था में ही वेद-वेदांगों का अध्ययन कर चुके थे। छोटी उम्र में सन्यास दीक्षा भी लिए थे। उन्होंने द्वैत सिद्धांत का प्रवर्तन किया। उडुपी में श्रीकृष्ण की स्थापना के बाद उसके संचालन तथा श्रीकृष्ण की पूजा के लिए अष्टमठों की स्थापना की और अपने आठ शिष्यों को मठों के पीठाधिपतियाँ बनाया। ये आठ मठ है - पेजावरा, पुत्तिगे, पलिमारु, अदमारु, सोदे, कणियूरु, शिरूरु और कृष्णापुरा।

मध्वाचार्य ने चक्रीय क्रम में एक के बाद एक पीठाधिपति को दो महीनों तक मंदिर को संचालन करने का अधिकार दिया। दो महीनों के बाद दूसरे पीठाधिपति को अधिकार हस्तांतरण किया जाता था। सोदे मठ के पीठाधिपति यतीन्द्र वादिराजा के समय में यह समय २

महीनों से २ वर्षों तक बढ़ाया गया। अधिकार हस्तांतरण के इस प्रकार का रिवाज, जो 'पर्याया' कहा जाता है, विश्व में अन्य किसी मंदिर में नहीं दिखाई पड़ता है। वर्तमान में अदमारु मठ के स्वामी ईशप्रियातीर्थ श्रीपाद वर्ष २०२२ तक पर्याय अधिकारी के रूप में कार्य निभायेंगे।

### साहित्य सेवा :

मध्वाचार्य ने द्वैत दर्शन के ब्रह्म सूत्र पर भाष्य तथा उपनिषद, गीता, महाभारत आदि पर टीकाएं और अनेक कृतियाँ भी लिखीं। दास साहित्य का जन्म भी इसी उडुपी क्षेत्र में ही हुआ। पुरंदरदास कर्नाटक संगीत का पितामह कहे जाते है। कनकदास और पुरंदरदास तन्मय होकर उडुपी के वीदियों में गाया करते थे। यतीन्द्र नरहरितीर्थ और यतीन्द्र वादिराजतीर्थ ने भी कन्नड़ भाषा में कीर्तनों को लिखा है। इन सब से कन्नड साहित्य की संपदा तथा गरिमा बढ़ाया गया हैं।

### श्रीकृष्ण मंदिर का स्थापत्य :

श्रीकृष्ण का मंदिर केरला स्थापत्य के अनुसार निर्मित है। यह मंदिर १५०० वर्ष पुराने लकड़ी और पत्थर से बना हुआ है। १३वीं शताब्दी में मध्वाचार्य से कृष्ण मठ (मंदिर) का निर्माण हुआ था। उत्तर द्वार से मंदिर के अंदर जाने पर बीच में मध्व सरोवर दिखाई पड़ती है प्रधान मंदिर का द्वार दाई ओर होता है, उससे थोड़ा आगे जाने पर चेन्नकेशव द्वार दिखाई पड़ता है। वहाँ से गर्भगृह का प्रवेश किया जता है। चेन्नकेशवस्वामी द्वार से आगे जाने के बाद चंद्रशाला हॉल प्रवेश करते हैं। वहाँ कनकन खिड़की से श्रीकृष्ण का दर्शन किया जाता है। चंद्रशाला में चार स्तंभों का मंटप हैं और उसका ऊपरी भाग रजत से लेपित है। प्रधान मंदिर में गरुड, मध्वाचार्य, पांडुरंगा, सुब्रह्मण्य, नवग्रह और हनुमान आदि के छोटे मंदिर दिखाई पड़ते हैं। मंदिर में एक दीपस्तंभ है जहाँ पवित्र तेल से दीपक जलता रहता है। गर्भगृह के पीछे चेन्नकेशव स्वामी मंदिर है।

कृष्ण मठ के समीप दो बड़े मंदिर दिखाई पड़ते हैं। श्रीकृष्ण मंदिर के दर्शन से पहले मंदिर के बाहर स्थित चंद्रमौलेश्वर और अनंतेश्वर मंदिर का दर्शन करना एक रिवाज है। आनंतेश्वर मंदिर उडुपी के सबसे पुराना, माने १२०० वर्ष पूर्व का माना जाता है। इस मंदिर में प्रतिमा देखने पर शिवलिंग के आकार की है; पर लिंग के सामने मानव आकृति बनी हुई है। शैव इसे लिंग मानते हैं, तो वैष्णव परशुराम (विष्णु का अवतार) मानते हैं।

### अद्भुत है कन्हैया का स्वरूप :

यहाँ बालकृष्ण का रूप उसके नाम के समान बहुत ही आकर्षक है। श्याम वर्णवाले मुग्ध कृष्ण कन्हैया एक हाथ से मखानी और दूसरे हाथ से रस्सी को पकड़कर, लंबे तिलक धारण करके, विशाल नेत्रों से देख रहे हैं। श्रीकृष्ण सोने के उपवीत से शोभायमान दिखाई पड़ते हैं। इस कृष्ण के रूप को विश्वकर्मा ने एकशिला शालिग्राम पत्थर से मूर्ति का रूप दिया था। एक दिन कृष्ण को सोने के आभरणों से अलंकृत किया जाता हैं, तो एक और दिन वज्राभरणों से श्रृंगार किया जाता है। एक किलो सोना और ३००० वज्रयुक्त किरीट से कन्हैया की शोभा को बढ़ाते हैं।

### पूजाविधि :

इस मंदिर में अन्य मंदिरों से भिन्न पांचरात्रागम तथा तंत्रसार पद्धति के संयुक्ताधारित निर्माल्य विसर्जन, उषाकाल पूजा, अक्षय पात्र-गोपूजा, पंचामृताभिषेक, ऊध्वर्तना पूजा, स्वर्ण कलश अभिषेक, अलंकार पूजा, अवसरसनकादि पूजा, महापूजा, चामरसेवा, रात्रि पूजा, उत्सव मंडप पूजा, कोललु सेवे (वेणुनादन सेवा), शयनोत्सव आदि कुलमिलाकर १४ बार पूजा मध्वाचार्य के समय से बहुत निष्ठा के साथ अनुष्ठान किया जा रहा है। गर्भगृह में केवल पीठाधिपतियों के लिए प्रवेश है। श्रीकृष्ण की प्रधान पूजा को पर्याय पीठाधिपति से किया जाता है। अन्य पीठाधिपतियाँ १४ में से बाकी पूजाओं में भाग लेते हैं। श्रीकृष्ण को पंचामृताभिषेक के अनंतर अलंकार की जाती है; नैवेद्य चढ़ाया जाता है; आरती उतारी जाती है। श्रीकृष्ण को नैवेद्य उसी अक्षय पात्र में समर्पित किया जाता है, जिसको मध्वाचार्य ने ८०० वर्षों पहले अपने आठ शिष्यों को दिया था। भगवान के अभिषेक तथा अलंकार करते समय भक्तों को दर्शन

नहीं दिया जाता है। अभिषेक के बाद पुष्पों से, आभूषणों से अलंकृत श्रीकृष्ण की छवि अवर्णनीय है।

### अन्ना ब्रह्मा :

अन्न दासोह क्षेत्र कहलानेवाले उडुपी मंदिर में भगवान को अक्षय पात्र में नैवेद्य चढ़ाने के बाद हर दिन हजारों भक्तों को प्रसाद के रूप में भोजन परोसा जाता है। हर दिन हजारों भक्तों के आने पर भी अन्न की कमी कभी नहीं हुई। आज उडुपी जिले में ३२,००० बच्चों को अन्ना दासोहा योजना के द्वारा पौष्टिक आहार दिया जाता है। मध्वाचार्य के समय से (८०० वर्षों से) आज तक निर्बाध गति से अन्न दासोहा कार्यक्रम आचरण में है।

### उत्सव और त्योहार :

मंदिर में पूरे वर्ष में अधिक दिन कोई न कोई उत्सव मनाये जाते हैं। इसलिए उडुपि नित्योत्सव नाडु (नित्योत्सव नगर) भी कहा जाता है।

### पर्यायोत्सव :

उडुपी श्रीकृष्ण मठ में दो वर्षों के बाद किये जानेवाले अधिकार हस्तांतरण 'पर्याया' कहा जाता हैं। इस सुअवसर पर किए जानेवाला आचरण 'पर्यायोत्सव' कहा जाता है। १५२२ ई. से मध्वाचार्य के समय में आरंभ हुई यह प्रथा आज भी बिना किसी बदलाव के यथावत पालन की जाती है।

पर्यायोत्सव के पिछले दिन शाम को भावी पर्याय पीठाधिपति उडुपी से १५ किलोमीटर दूरी पर स्थित दंड तीर्थ में नहाके रात १ बजे को उडुपी आते हैं। बाकी पीठाधिपतियाँ उसका स्वागत करते हैं। वहाँ से भावी पीठाधिपति पल्लकी में बैठके जुलूस होकर आगे चलते हैं। तब उडुपी में अनेक वैविद्यमय कला प्रदर्शन, नृत्य, वाद्य, स्तब्धचित्र, विविध वेषधारियों का कला प्रदर्शन होता है। वहाँ जनसागर ही उमड़ पड़ता है। सभी पीठाधिपतियाँ कनकन किंडी से भगवान के दर्शन प्राप्त करते है। इस के बाद वर्तमान पीठाधिपति भावी पीठाधिपति को सर्वज्ञ पीठ पर बिठाके अक्षय पात्र, गर्भ गृह की चाबी और अन्य पूजा सामग्री को हस्तांतरण करते हैं। बाद में सभांगना में मंत्रियों तथा राज्य सरकार के अधिकारियों के साथ बैठक होता है। इसके साथ पर्यायोत्सव समापन होता है।

### जन्माष्टमी उत्सव-श्रीकृष्ण परिपूर्ण व्यक्तित्ववाले पुरुष :

महाविष्णु के दस मुख्य अवतारों में आठवाँ अवतार श्रीकृष्ण है। भगवान होने पर भी उन्होंने जन्म से लेकर अंत तक सामान्य मनुष्य की तरह अनेक कष्टों का सामना करते हुए मनमोहक लीलाओं को भी दिखाया हैं। मथुरा के जेल में कृष्ण जन्म के तुरंत बाद अपने माता-पिता से अलग हो गये। नंदगोकुल में अपनी बाल लीलाओं से सबको मंत्रमुग्ध करके लोकरंजक कहलाये। देखने में नन्हा बालक था, पर अनेक राक्षसों का वध करके अपना चमत्कार दिखाया। युवावस्था में बृंदावन में श्रीकृष्ण की रासलीला से गोपिकाएँ उसकी ओर आकर्षित हो गई। अपना दायित्व निभाते हुए वे समाज में फैली अंधविश्वासों को दूर किये। इसका उदाहरण है- इंद्र की पूजा को रोक के गोवर्धन पूजा को शुरू किये और गोवर्धन गिरधारी कहलाए। इसके बाद एक वीर पुरुष के रूप में अपने मामा होने पर भी मोह को त्याग कर अत्याचारी कंस का वध करके जगदोद्धारक बने। श्रीकृष्ण शांत स्वभाव के व्यक्ति थे। इसका अर्थ यह नहीं कि वे अन्याय को सहते थे। जब शिशुपाल श्रीकृष्ण को अनेक रीतियों से दूषित करने पर भी संयम को बनाए रखे। एक बार उसने सीमा को पार किया तो कृष्ण ने उसका वध करने से नहीं हिचकिचाया। धर्म स्थापना के लिए महाभारत युद्ध करने के लिए भी तैयार हो गए। स्वयं श्रीकृष्ण कहते हैं-

*"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत*
*अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥"*

*"परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम्।*
*धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगेयुगे।"*

अर्थात् धर्म का नाश तथा अधर्म के उत्थान होने पर, साधुओं की रक्षा तथा अत्याचरियों की शिक्षा के लिए हर एक युग में अवतार लेते हैं। धर्माध्यक्ष कृष्ण ने युद्ध में पांडवों का पक्ष लिया, क्योंकि धर्म उनके पक्ष में था। इसके लिए वे महान व्यक्ति होने पर भी अर्जुन के रथ का

सारथी बने। यह उनके सरल स्वभाव का द्योतक है। अर्जुन के लिए वे सिर्फ मित्र ही नहीं, गुरु भी थे। गीता का उपदेश देकर अर्जुन में चैतन्य जगाकर में युद्ध करवाया जो उस समय में अनिवार्य था।

उनमें राजा बनने की कोई इच्छा नहीं थी; वे कभी भी राजा नहीं बने। महाभारत युद्ध के बाद युधिष्टिर को राजा बनाकर फिर द्वारका लौटे। निस्वार्थी कृष्ण सिर्फ धर्म स्थापना के लिए आजीवन कर्तव्य कर्म करनेवाले कर्मवीर थे। वे व्यवहार निपुण भी थे तथा अच्छे दार्शनिक भी थे। जहाँ कृष्ण रहता था, वहाँ वैभव, आडंबरता दिखाई पड़ती थी, पर उनका मन वैराग्य से भरा रहता था। सबको प्यार करता थे, पर विराग भाव रखते थे। वे गुणातीत थे; जिस प्रकार का जीवन उन्होंने जिया, वो हजारों वर्षों बाद भी आधुनिक युग में सबके लिए स्पूर्तिदायक है। गीता में जो कहाँ गया है, वह सत्य है कि 'जहाँ श्रीकृष्ण है, वहाँ विजय निश्चित है।''

## जन्माष्टमी पर विशेष पूजा :

उडुपी में सौरमान पद्धति के अनुसार भाद्रपद कृष्णपक्ष अष्टमी रोहिणी नक्षत्र में आधी रात को ''कृष्णजन्माष्टमी' अथवा 'जन्माष्टामी' मनाते है। यह उत्सव धूमधाम से मनाया जाता है। यहाँ पवित्र मिट्टी से श्रीकृष्ण की प्रतिमा बनायी जाती है। स्वर्णरथ (जो ब्रह्मरथ भी कहा जाता है) में रत्न जटित स्वर्ण पीठ पर कृष्ण को बिठाके शोभा यात्रा किया जाता हैं, जो 'लीलोत्सव' अथवा 'विट्टल पिंडी' कहा जाता है। उस समय देश-विदेशों से लाखों लोग इकट्ठे हो जाते हैं। उस दिन पूरे मंदिर को सजाया जाता है। पारंपरिक वाद्य एक ओर बजाये जाते हैं तो दूसरी ओर शेर के पोशाकवालों से शेर का नृत्य किया जाता हैं, जो मंदिर का पारंपरिक नृत्य है। बच्चों को कृष्ण वेश धारण करवाते हैं। वैसे भी, जहाँ कृष्ण रहता है, वहाँ लीलाएँ अवश्य होती है, जो परम आनंद देते हैं। शोभा यात्रा के बाद कृष्ण की मिट्टी की मूर्ति को मध्व सरोवर में विसर्जित किया जाता है।

## भगवद्गीता - जीवन का सार :

महाभारत युद्ध के ठीक पहले जब अर्जुन युद्ध क्षेत्र में सब बंधुओं, मित्रों को देखकर अनेक संदेहों से, मोह से और डर से पीड़ित होकर शक्तिहीन हो गये थे। गीता का प्रथम अध्याय है 'अर्जुन विषाद योग'। माधव ने अर्जुन को युद्ध करने के लिए जो उपदेश दिया था वही ''भगवद्गीता'' है। गीता का अंतिम अध्याय 'मोक्ष सन्यास योग'। इस अध्याय में जगद्गुरु अर्जुन से पूछते हैं कि ''तेरे अज्ञान से जनित मोह नष्ट होगया? ''अर्जुन बोलते है- ''हे अच्युत! आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया और मैंने बुद्धि (स्मृति) प्राप्त कर ली है।'' कुंती पुत्र संशय रहित होकर, युद्ध करता है, जो उसका धर्म था, जिसका पालन अनिवार्य था।

मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी के दिन कृष्ण अर्जुन को उपदेश दिया था वह दिन 'गीताजयंती' कहा जाता हैं। उस दिन एकादशी होने से 'मोक्षदा एकादशी'; उपनिषदों का सार होने से 'गीतोपनिषद'; एक विज्ञान (उपदेश) होने से 'गीताशास्त्र' भी कहा जाता हैं। इसमें १८ अध्याय है, जो कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग से संबंधित है। भगवद्गीता किसी एक धर्म से संबंधित नहीं है। अर्जुन के माध्यम से सारी मानवता के लिए उपदेश है। ५००० वर्षों के बाद भी आधुनिक युग में विश्वभर में युग में अनेक समस्याओं का समाधान इसमें मिलता है। इस आधुनिक युग में अनेक भौतिक सुख सुविधाएँ होने पर भी मनुष्य को शांति तथा आनंद नहीं मिल रहे हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक ग्रंथ है। सही अर्थ में यह मनुष्य का जीवन दर्शन है। किसी भी कार्य को तनाव से मुक्त होकर निपुणता तथा सफलता पूर्वक करने की रीति के बारे में केशव ने कहा है-

*''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।*
*मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।''*

इसका अर्थ है हमारा अधिकार केवल काम करना है; फल पर अधिकार नहीं है। कर्म करते समय फल की इच्छा मत करना और फल की इच्छा छोड़ने का यह अर्थ यह नहीं है कि कर्म करना ही छोड़ दे। तटस्थ भाव से कार्य करने पर काम करने की आसक्ति बनी रहती है और काम को शांति से निपुणतापूर्वक किया जा सकता हैं।

हमें व्यवहार में स्थितप्रज्ञता की आवश्यकता है इसके बारे में गीताचार्य कहते हैं -

*''समःशत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।*
*शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।''*
*''तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्*
*अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः।''*

जो शत्रु तथा मित्रों, मान तथा अपमान, सुख तथा दुख, यश तथा अपयश में तथा कठिन परिस्थितियों में समभाव रखता है वो मेरा अत्यंत प्रिय है। बाह्य परिस्थितियाँ जो भी हो, उनसे जो व्यक्ति विचलित नहीं होता; वही धैर्यवान है; कार्य साधक है। सही ज्ञान के प्रादुर्भाव से उसमें भय, राग, क्रोध, स्वार्थ भावनाओं से मुक्त होकर जीवन साफल्य बनाता है। आध्यात्मिक साधकों के लिए ज्ञान मार्ग और भक्ति मार्ग के समन्वय से मोक्ष प्राप्ति तक जाने का मार्गदर्शन दिखाया है।

**गीता जयंती उत्सव :**

जिस दिन योगेश्वर कृष्ण अर्जुन को उपदेश दिया था, उस दिन को 'गीताजयंती' के नाम से विश्व भर में उत्सव मनाया जाता है। उडुपी मंदिर में इस दिन श्रीकृष्ण तथा भगवद्गीता की पूजा की जाती है। फिर शहर के गीता मंदिर में पीठाधिपतियों द्वारा दीप प्रज्वलन से कार्यक्रम का आरंभ किया जाता है। पीठाधिपतियों से गीता प्रवचन दिया जाता है। वहाँ के लोगों द्वारा पूरे गीता का पारायण किया जाता है। भगवद्गीता स्पर्धा में जीतने वालों को पुरस्कार दिया जाता है।

**सप्तोत्सव :**

मध्वाचार्य से श्रीकृष्ण को उडुपी में प्रतिष्ठापित दिवस को सप्तोत्सव के रूप में एक सप्ताह तक धार्मिक कार्यक्रम, विशेष कार्यक्रमों के साथ मनाया जाता है।

**मध्व नवमी :**

अपने सार्थक जीवन के बाद मध्वाचार्य अपने शिष्यों को छोड़कर पिंगल नाम संवत्सर शुद्ध नवमी को अदृश्य हो गए थे। उस दिन को मध्व नवमी के रूप में आचरण किया जाता है। कृष्ण मंदिर में उत्सवों के अलावा अनेक त्योहारों का आचरण किया जाता है। मकर संक्रांति, रथसप्तमी, हनुम जयंती, नवरात्री महोत्सव, मध्व जयंती (विजया दशमी), नरकचतुर्दशी, दीपावली आदि त्यौहार बहुत धूम धाम से मनाये जाते हैं।

प्रत्येक त्योहार के अनुसार श्रीकृष्ण को सजाया जाता है। श्रीरामनवमी के दिन कृष्ण के मखाने और रस्सी के बदले धनुष बाण से सजाया जाता है। अक्षय तृतीया का दिन भगवान परशुराम का अवतार हुआ था। इससे उस दिन कृष्ण कन्हैया परशु (कुल्हाड़ी) पकड़कर वीर के रूप में सामने आते हैं। युगादि के दिन मंदिर में पंचांग श्रवण होता है। गणेश चतुर्थी के दिन मंदिर के द्वार के सामने गणेश की मूर्ति रखी जाती है। चार दिन तक इसकी पूजा चलती है और गण होमा (हवन) की जाती है। आखरी दिन जुलूस होकर गणेशजी को सरोवर में विसर्जन किया जाता है। हर एक त्यौहार अत्यंत वैभवता तथा निष्ठा से मनायी जाती है। कर्नाटक की साहित्य और संस्कृति और परंपरा को संपन्न करने में उडुपी कृष्ण मठ का बहुत बड़ा योगदान है।

अनेक विशिष्टताओं से संपन्न यह कृष्ण मंदिर ७०० वर्षों से मध्वाचार्य जैसे तपस्संपन्न से आदेशित नियमों का पालन निर्बाध रूप से, निष्ठा के साथ पालन किये जा रहा है। ये सब श्रीकृष्ण की महिमा, मध्वाचार्य की तपोशक्ति, पीठाधिपतियों की निष्ठा और भगवान पर भक्तों का अपार विश्वास से संभव हो सका है। श्रीकृष्ण लोगों के मन-मन में बसे है। यहाँ आने पर श्रद्धालुओं का मन शांत और आध्यात्मिक आनंद से झूम उठता है। एक बार कन्हैया के रूप में प्रेम करते हैं तो अगली बार जगद्गुरु, जगादोद्धारक श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन हो जाते हैं। जो पूर्ण विश्वास के साथ भगवान से प्रार्थना करते है उसकी कार्य सिद्धि पूर्ण होती है।

*''मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिं।*
*यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्द माधवम्।।''*

अर्थात् जिनकी कृपा से गूंगे बोलने लगते हैं, लंगड़े पहाड़ों को पार कर लेते हैं, उन परमानंद स्वरूप श्री माधव की वंदना करता हूँ।

**।। कृष्णम् वंदे जगद्गुरुम् ।।**

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

# शरणागति मीमांसा

## (षष्टम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि. तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

११०

श्रीमते रामानुजाय नमः

इनका खुलासा निर्णय तथा अकिञ्चन, अनन्य गति किसको कहते हैं इस बात का भी भली भाँति से निर्णय शरणागति मीमांसा के पूर्व भाग में कर आये हैं। कर्म, ज्ञान, भक्ति को परलोक का साधन मानकर स्वतंत्रता पूर्वक जो करना है उसीको उपायान्तर तथा साधनान्तर भी कहते हैं। माया बन्धन से छूटकर परमपद जाने केलिए भगवान को तो उपाय मानते हैं और स्वरूपानुरूप कर्म ज्ञान भक्ति को कैंकर्य भावना से करते हैं उनको शरणागत अधिकारी कहते हैं। भगवान की शरणागति के बल पर माया तरने की चाहना करने वाले जो शरणागत लोग हैं वह कर्म, ज्ञान, भक्ति को छोडते नहीं हैं किन्तु सब करते हैं। फर्क इतना ही है कि उपायान्तरी लोग उसको परलोक का साधन मानकर करते हैं और शरणागत लोग माया से छूटकर परमपद में जाकर श्रीजी के साथ भगवान का नित्य कैंकर्य मिलने के लिए साधन तो श्री भगवान को मानते हैं और कर्म ज्ञान भक्ति को फल स्वरूप कैंकर्य भावना से करते हैं। जो साधन भावना से भक्ति को करते हैं उन्हें भक्त कहते हैं तथा उपासक भी कहते हैं। उन्हीं को उपायान्तरी तथा साधनान्तरी भी कहते हैं। साधनान्तर तथा उपायान्तर अधिकारी भी उन्हीं को कहते हैं। श्री भगवान को उपाय मानते हैं और कर्म ज्ञान भक्ति को साधन भावना से न करके कैंकर्य भावना से करते हैं उनको प्रपन्न भी कहते हैं। शास्त्रों में उनका नाम भागवत भी बताया हैं। उसी अधिकारी का नाम श्रीवैष्णव भी है। श्रीवैष्णव भी शरणागत का ही नाम है। यही विषय चला है कि इसी जन्म के अन्त में दुरत्यय माया से तरकर परमपद जाने के लिए कठिन उपाय है तथा सीधा उपाय कौन है। शास्त्रों के द्वारा अनेक प्रकार से साधन भक्तियोग को अत्यन्त कठिन तथा परतन्त्र स्वरूप के विरुद्ध बताया गया है। और भगवान की शरणागति को सबके लायक सरल से सरल अचूक उपाय निर्णय किया। आगे उसी शरणागति प्रसंग को और भी खुलासा करके कह रहा हूँ। सावधान चित्त से श्रवण करिये।

''यो वै ब्रह्माणं'' इस मंत्र में यह आया है कि ''मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये'' याने मोक्ष की चाहना करने वाले अधिकारी को चाहिए कि श्री भगवान के शरण हो जाय। अब यह विचारना है कि शरण शब्द का इस प्रसंग में क्या अर्थ है। लक्ष्मी तन्त्र का वचन है कि :-

*उपाये गृह रक्षित्रोः शब्दः शरण मित्ययम्।*
*बर्तते साम्प्रतं चैष उपायार्थैक बाचकः।।*

इसका भाव यह भया कि यद्यपि शरण शब्द का तीन अर्थ होता है एक तो रक्षक, दूसरा मकान तीसरा उपाय। परन्तु जहाँ-जहाँ शरणागति के प्रसंग में शरण शब्द आवे वहाँ-वहाँ इसका अर्थ उपाय समझना चाहिए। इससे 'मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये' इसका खुलासा यह अर्थ भया कि माया बन्धन से छूटने की इच्छा से मैं परमात्मा के शरण होता हूँ। याने संसार बन्धन से छूटकर परमपद में जाने के लिए प्यारे परमात्मा को उपायत्व करके स्वीकार करता हूँ। इससे यह सिद्ध हुआ कि माया से तरने के लिए भगवान को उपायत्व करके स्वीकार करके रहना इसीका नाम भगवान की शरणागति करना है। जहाँ-जहाँ यह शरणागति का प्रसंग आवै वहाँ-वहाँ यही अर्थ समझना चाहिए। बडो का तथा शास्त्रों का यह भी कहना है कि भगवान की निर्हेतुक कृपा का भरोसा

संसार सागर से पार होने के लिए रखना इसीका नाम भगवान की शरणागति करनी है। चाहे भगवान को उपायत्व करके स्वीकार करना या भगवान की निर्हेतुक कृपा के भरोसे रहना ये सब एकी बात है। 'देवी ह्येषा' इस श्लोक में भगवान आज्ञा किये हैं कि दुरत्यय हमारी माया से तरने के लिए एक हमारी ही शरणागति अचूक उपाय है। इसी प्रसंग को लेकर ''श्री रामायण'' में श्री हनुमानजी के द्वारा महात्मा तुलसीदासजी कहवा रहे हैं कि :-

*चौ - नाथ जीव तव माया मोहा।*
*सो निस्तरै तुम्हारेइ छोहा।।*

श्री हनुमानजी श्री रघुनाथजी से प्रार्थना करते हैं कि हे सरकार! हे नाथ! यह जीव आपकी दुरत्यय माया से मोहा हुआ है। इसका निस्तार तो आप ही के छोह से हो सकता है याने आपकी निर्हेतुक कृपा बिना इससे यह कभी छूटकारा नहीं पा सकता।

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि श्री गीता के ''देवी ह्येषा'' इस श्लोक के प्रसंग से और इस चौपाई के प्रसंग से पूरा-पूरा इस बात का मिलान होगया कि भगवान की निर्हेतुक कृपा के बल से माया से तरने का भरोसा करना या भगवान की शरणागति के बल से, दोनों एकी बात है। और भी महात्मा श्री तुलसीदासजी कहते हैं :-

*''माधव अस तुम्हारि है माया।*
*करि बिचार पचि मरिय तरिय नहिं जबलौं करहु न दाया।''*

फिर भी दूसरे भजन में कहते हैं कि :-

*''अस कछु समझिपरै रघुराया।*
*बिन तव कृपा दयाल दास हित मोह न छूटै माया।।''*

इन पदों से भी यही निश्चय हुआ कि दुरत्यय यह जो भगवान की माया है सो भगवान की निर्हेतुक कृपा के सहारा से ही छूट सकती है। ''नाथ जीव तव माया मोहा। सो निस्तरै तुम्हारेइ छोहा।।'' इस चौपाई से यही सारांश निकला कि दुरत्यय माया से पार हो जाने के लिए जिसकी इच्छा हो उसको चाहिए कि एक श्रीरघुनाथजी की निर्हेतुक दया का ही सहारा लेवे। साथ ही साथ ये भी याद रखे कि भगवान की निर्हेतुक दया का सहारा लेने वालों का माया बन्धन से जरूर छुटकारा हो जाता है। परन्तु निर्हेतुक दया का यह स्वभाव है कि वह दूसरे उपाय की गन्ध तक भी नहीं सह सकती है। इसीलिए आगे की चौपाई में झट कह दिये कि :-

*तापर श्री रघुबीर दुहाई। जानौं नहिं कछु भजन उपाई।।*

पहली चौपाई में प्रार्थना किये कि हे नाथ! आपकी माया से मोहा हुआ जो जीव है सो आपही की कृपा से छुटकारा पा सकता है। याने मुझे तो माया मोह से छूटने के लिए आपकी कृपा के सिवा स्वप्न में भी दूसरा अवलम्ब नहीं हैं। दूसरी चौपाई में प्रार्थना करते हैं कि हे श्री रघुनाथजी सरकार! मैं तो सरकार की शपथ करके कहता हूँ कि एक सरकार की कृपा के सिवा दूसरा भजन उपाय जानता तक भी नहीं हूँ। श्री हनुमानजी के श्रीमुख से निकली इन दो चौपाइयों के द्वारा पूरा-पूरा शरणागति का स्वरूप निर्णय हुआ। उपायान्तर त्याग पूर्वक ही भगवान को या भगवद्दया को उपाय मानकर रहेंगे, वही मोह माया से छूटकर अवश्य परंधाम को जायेंगे।

क्रमशः

# श्री प्रपन्नामृतम्

## (२४वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

(गतांक से)

### यतीन्द्र श्रीरामानुजाचार्यजी को विषप्रदान

यतीन्द्र श्रीरामानुजाचार्यजी ने गद्यत्रय तथा भगवदाराधन विधि की रचना कर श्रीमन्नारायण ही परतत्त्व हैं इस बात को सिद्ध कर दिया तथा श्रीवैष्णव दर्शन की अनुदिन वृद्धि करते हुए वे श्रीरंगम में सुखपूर्वक निवास करने लगे। यतीन्द्र श्री का यह शासन तथा अर्चा प्रकार देखकर अर्चकों के लिए यह बन्धन-सा प्रतीत होने लगा। इससे उनमें प्रधान एक अर्चक ने किसी लोभी ब्राह्मण को उन्हें विष मिश्रित अन्न देने के लिए ठीक किया। उस लोभी ब्राह्मण ने अपनी पत्नी से यह प्रस्तावित किया कि वह यतिराज श्रीरामानुजाचार्य के लिए विषमिश्रित भोजन तैयार करें। यह सुनकर पहले तो साध्वी देवी बड़ी दुःखी हुई और ऐसा गर्हित कर्म करना अस्वीकृत कर दिया, किन्तु अपने पति की प्रेरणा और क्रोध को देखकर भोजन तैयार करके उसमें विषमिश्रित अन्न लिख दिया। उस साध्वी का संदेश देखकर श्रीरामानुजाचार्य स्वामीजी ने भोजन नहीं किया और कुत्ते को बुलवाकर भोजन दे दिया, जिसे खाकर वह मर गया।

यतिराज ने जब कई दिनों तक उपवास किया तब इस वृत्तान्त को सुनकर श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी शीघ्र ही श्रीरंगम पधारे। अपने आचार्य का आगमन सुनकर श्रीरामानुजाचार्य शीघ्र ही अपने शिष्यों के साथ जाकर दक्षिण कावेरी में उनका दर्शन करके धूप से जलती हुई कावेरी की बालुकाराशि में ही साष्टांग-प्राणाम किया किन्तु परीक्षार्थ श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने उन्हें उठने के लिए आदेश नहीं दिया। अपने गुरुदेव श्रीरामानुजाचार्य के तप्त बालुका राशि में जलते हुए शरीर को देखकर श्रीआत्रेय गोत्रोत्पन्न एक श्रीवैष्णव श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी से बोले कि- ''क्या आप मेरे गुरुदेव को मार डालना चाहते हैं?'' ऐसा कहकर उन्होंने सोकर आचार्य के शरीर को तपती रेती से बचाने के लिए भक्ति परवश होकर अपने शरीर पर चढ़ा लिया। यह देखकर श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी श्रीरामानुज स्वामीजी को उठाते हुए उनका हाथ पकड़कर बोले- ''यतिराज! आप इसी ब्राह्मण से बनवाकर भोजन किया करें।'' अपने आचार्य की आज्ञा पाकर श्रीरामानुज स्वामीजी उसी ब्राह्मण से भोजन बनवाने लगे।

एक बार भगवद्भक्ति परायण श्रीरामानुज स्वामीजी अकेले ही भगवान श्रीरंगनाथ का दर्शन करने के लिए चले गये। उन्हें अकेले आये हुए देखकर प्रधानार्चक ने उन्हें मारने की इच्छा से विष मिलाकर तीर्थ दे दिया और उसे जानते हुए भी भगवत्पाद श्रीरामानुज स्वामी उस तीर्थ को भगवान पर अपना सारा भार छोड़कर पी गये किन्तु भगवत्कृपा से वह तीर्थ विष प्रभाव रहित हो गया। इस तरह यतिराज को मारने के लिए अर्चकों ने अनेक प्रयास किये किन्तु सब व्यर्थ हो गये। फिर श्रीयतिराज इन सभी बातों को जानते हुए भी सबों की रक्षा समान रूप से करते हुए भेद-भाव रहित श्रीरंगम में सुखपूर्वक रहते थे।

॥ श्रीप्रपन्नामृत का २४वाँ अध्याय पूरा हुआ ॥

क्रमशः

(गतांक से)

# मंगलाशासन पाशुरम्

*तमिल मूल - श्री टी.के.वी.एन. सुदर्शनाचार्या*

*हिन्दी अनुवाद - श्री के.रामनाथन*
*मोबाइल - ९४४३३२२२०२*

*ओयुम् मूप्पु पिरप्पु इरप्पु पिणि*
*वीयुमारु सेय्वान् तिरुवेंगडत्तु*
*आयन् नाळ-मलर् आम् अडित्तामरै*
*वायुळ्ळुम् मनत्तुळ्ळुम् वैप्पारगट्के।। (२९२७)*

**कठिन शब्दार्थ -** मूप्पु-बुढापा, विरप्पु-जन्म, इरप्पु-मृत्यु, पिणि-रोग, आयन-गोपाल, अडित्तामरै-पाद पंकज

**भावार्थ -** सभी संत कवि आळ्वारों का अडिग विश्वास है कि भगवान विष्णु वेंकटगिरि पर विराजित होकर अपने भक्तों पर कृपा की वर्षा करते हैं। इसलिए वे सब वेंकटगिरि की विशेषता को अनेक स्थानों में प्रकट करते हैं।

वैसे ही संत कवि नम्माळ्वार गाते हैं, ''अपनी उपासना करने वाले सच्चे भक्त पर कृपा करने वाले सर्व शक्ति संपन्न भगवान विष्णु वेंकटगिरि पर आकर निवास करते हैं। तिरुवेंकटगिरि में निवास करने वाले ऐसे महान भगवान विष्णु के पाद पंकज को मन में विचार करके मुँह से उनकी स्तुति करें तो वे हमारे बुढापे को दूर कर देंगे, हमारे जन्म-मरण की यात्रा का अंत कर देंगे और हमें रोगों से मुक्त कर देंगे। इसलिए यदि हम सदा उनकी महिमा को मन में विचार करेंगे और मुँह से उनकी कीर्ति गाएँगे।''

*ताळ् परप्पी मण् ताविय ईसनै,*
*नीळ् पोळिल् कुरुकूर् सडगोपन् सोल्*

*केळ् इल् आयिरत्तु इप् पत्तुम् वल्लवर्,*

*वाळवर् वाळ्वु एय्दी ज्ञालम् पुकळवे॥ (२९२९)*

**कठिन शब्दार्थ -** ताळ्-पग, ईसन-भगवान, षडगोबन-नम्माळवार, वल्लवर-योग्य, ज्ञालम-संसार, पुगळवे-कीर्ति पाकर

**भावार्थ -** भगवान विष्णु अपने अवतारों के द्वारा अन्याय का अंत करके न्याय को स्थापित किया था। उनके दस अवतारों में वामन अवतार अपना विशेष महत्व रखता है। यह उनका पांचवाँ अवतार है। इस अवतार की विशेषता यह है कि उनके अन्य अवतारों की तरह किसी का वध न करके भगवान ने असुर राजा बलि के घमंड को दूर करके उस पर अपनी कृपा दिखायी। अपने को बडा दानी मानकर घमंड करने वाले राजा बलि से तीन पग स्थान को दान में लिए भगवान ने अपने दोनों पगों से भूमि और आकाश को नाप डाला और आखिर उसके सिर पर अपना पाँव रखकर तीसरा पग नाप डाला। कविता का तात्पर्य यह है कि अपने पगों से इस सारे संसार को भगवान विष्णु ने नाप डाला।

ऐसे श्रेष्ठ भगवान विष्णु की महिमा को तिरुकुरुगूर में जन्म लिए श्री षठगोपर् के नाम से प्रसिद्ध संत कवि नम्माळवार ने अपने हजारों पाशुरों से भगवान की कीर्ति गायी है। उल्लेखनीय बात यह है कि संत कवि नम्माळवार को भक्त जन तैंतीस विभिन्न नामों से बुलाकर उनकी कीर्ति गाते हैं।

ऐसे संत कवि से लिखित उपर्युक्त इस दस पाशुरों को जो बडी तन्मयता एवं भक्ति भाव से सीखकर गाते हैं वे सब के कीर्ति पात्र बनते हैं और उनको यशपूर्ण जीवन की प्राप्ति होती है।

क्रमशः

## तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

**स्वामिपुष्करिणी :** मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

**आकाश गंगा :** मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

**पापविनाशनम् :** मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

**वैकुंठ तीर्थ :** मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

**तुम्बुरु तीर्थ :** मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

**भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) :** यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

**ति.ति.दे. बगीचे :** देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिन में विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

**आस्थान मंडप (सदस हाल) :** यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

**श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) :** इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

**ध्यान केंद्र :** तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

# नायनाराच्चान्पिल्लै

- श्री अनुज कुमार अगर्वाल
मोबाइल - ९१७८९७६६६६

**जन्म नक्षत्र :** आवणि (श्रावण), रोहिणी नक्षत्र (यतीन्द्र प्रवणं प्रभावं में चित्रा नक्षत्र दर्शाया गया है)

**अवतार स्थल :** श्रीरंगम

**आचार्य :** श्रीपेरियवाच्चान पिल्लै

**शिष्य :** श्रीवादिकेसरी अलगिय मणवाल जीयर, श्री रंगाचार्यर्, परकाल दासर आदि

**परमपद स्थल :** श्रीरंगम

**रचनाएँ :** चरमोपाय निर्णयं, अनुत्व पुरुष्कारत्व समर्थनम्, ज्ञानार्नवं, मुक्त भोगावली, आलवन्दार के चतुश्लोकी; व्याख्यान, पेरियवाच्चान पिल्लै के विष्णु शेषी श्लोक का व्याख्यान, तत्त्व त्रय विवरण, कैवल्य निर्णयं आदि।

नायनाराच्चान्पिल्लै श्रीपेरियवाच्चान पिल्लै के दत्तक पुत्र थे। उनका नाम अलगिय मणवाल पेरुमाल नायनार् (सुंदर वर राजाचार्य) था। परकाल दासार की कृति परकाल नल्लान रहस्य में उन्हें सौम्यवरेश्वर नाम से संबोधित किया गया है। उन्हें ''श्री रंगराज दीक्षितर्'' के नाम से भी जाना जाता है और वे एक विद्वान व्यक्तित्व के धनी थे। उन्होंने सत् संप्रदाय के सिद्धांतों की स्थापना के लिए कई ग्रंथों की रचना बहुत प्रामाणिकता से की है।

उनकी रचनाएँ संप्रदाय के प्रमुख सार को प्रदर्शित करती है। उनके द्वारा रचित चरमोपाय निर्णय, एम्पेरुमानार और संप्रदाय में उनकी विशेष स्थिति के वास्तविक गौरव को दर्शाती है। अपनी चतु:श्लोकी के व्याख्यान में, उन्होंने बड़ी स्पष्टता से पेरिय पिराट्टी के गुणों को विस्तार से बताया है।

'प्रमेय रत्नम्' (वादिकेसरी अलगिय मणवाल जीयर के शिष्य यामुनाचार्य द्वारा रचित) में यह बताया गया है कि नायनाराच्चान्पिल्लै ने मुक्त भोगावली की रचना बहुत ही छोटी आयु में की थी और उसे पेरियवाच्चान पिल्लै को दिखाया था। उस रचना की गहराई को जानकर, पेरियवाच्चान पिल्लै उनकी बहुत सराहना करते हैं और उन्हें विस्तार से हमारे संप्रदाय के सार का अध्यापन शुरू करते हैं।

यद्‌यपि वादिकेसरी अलगिय मणवाल जीयर, श्री रंगाचार्यर, परकाल दासार आदि पेरियवाच्चान पिल्लै के शिष्य हैं परन्तु उन्होंने भगवत विषय आदि का अध्ययन नायनाराच्चान्पिल्लै के सानिध्य में किया।

इस तरह हमने नायनाराच्चान्पिल्लै के गौरवशाली जीवन की कुछ झलक देखी। वे महान विद्वान थे और पेरियवाच्चान पिल्लै के बहुत प्रिय थे। हम सब उनके श्रीचरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो।

**नायनाराच्चान्पिल्लै की तनियन :**

*श्रुत्यअर्थसारजनकम् स्मृतिबालमित्रम्।*

*पद्‌मोल्लसध भगवदंग्री पुराणभंधुम्।।*

*ज्ञानाधिराजम् अभयप्रदराज सूनुम्।*

*अस्मत् गुरुं परमकारुणिकम् नमामि।।*

❖❖❖

(गतांक से)

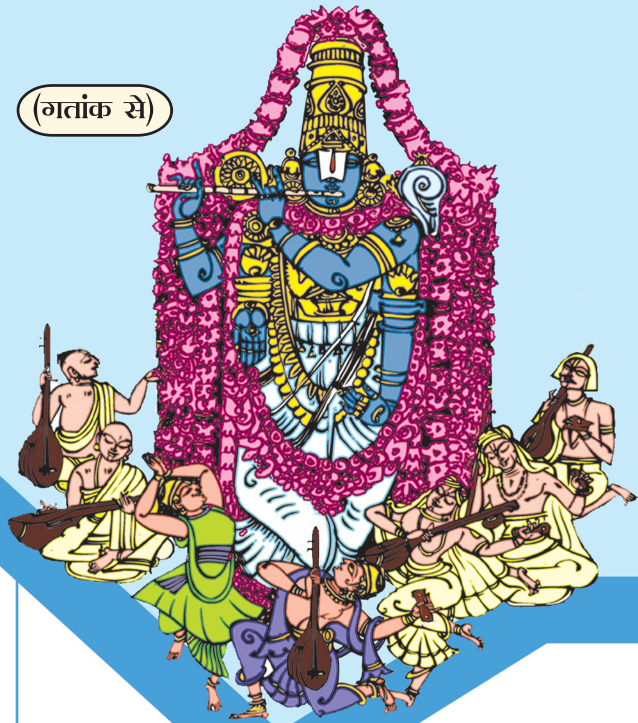

# हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु
हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
मोबाइल - ९४९०९२४६१८

*"पदक कौस्तुभधार। सरिगेय कंधर।*
*सुदरुशनदरधार। सुंदर मनोहर।*
*पदयुगदि नूपुर। इष्टि हनु सम्मनि।*
*हृदयस्थित गंभीर। बहुदान शूर।*
*विधि भवाद्यर पोरेवदातनु।*
*तुदि मोदलु मध्यम विरहितनु*
*उदुभवादिगलीगे कर्त्तनु।*
*त्रिदश पूजित त्रिभुवनेश।*
*सदुविलासदि स्वामि तीर्थदि।*
*उदिसुतिरे सिरिमहिले सहितदि।*
*पदुमनाभ पुरंदर विठल।*
*प्रति वरुष ब्रह्मोत्सवदि मेरेयुत।।"*

कौस्तुभमणि के पदक का हार, अन्यान्य कंठमालाओं से विभूषित होनेवाला, सुंदर, सुकोमल, मनोहर पादयुग्म जो प्रकाशमान हैं और जिन पर नूपुर सुशोभित हैं, विशाल वक्षवाला, अप्रतिम दाता, श्री वेंकटेश्वर स्वामी, ब्रह्म-रुद्रादि पर अनुग्रह करते हैं। ये आदि-मध्य-अंत रहित स्वामी हैं। ब्रह्म-रुद्रादि के कर्त्ता बनकर, तीनों लोकों में पूजादि स्वीकारनेवाला, तीनों लोकों के स्वामी बनकर, विलासवान स्वामी, स्वामिपुष्करिणी के कूल पर श्रीदेवी-भूदेवी समेत पद्मनाभी पुरंदर विठल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी, हर वर्ष की भांति ब्रह्मोत्सव में शोभायमान हैं।

स्वयंभू श्रीनिवास की दिव्यमंगलमूर्ति का वर्णन, अनुपास अलंकारों का प्रयोग करके, निम्नलिखित कीर्तन नाट्य के अनुकूल, ताल से युक्त, गायक को मनोल्लास दिलानेवाला, पाठकों के हृदय में विचित्र अनुभूति प्रदान करनेवाले के रूप में प्रस्तुत है।

'निन्नदिव्यमूरितिय कण्णुदेसिय नोडि धन्यनादेनोधरेयोळ' नामक मोहन राग में विरचित इस गाने का अगर श्रवण करेंगे, तो हर भक्त तिरुमल के मंदिर में संचार करने की अनुभूति प्राप्त करके ही रहेगा।

**राग** : मोहन **ताल** : अटतालम्

**पल्लवी** : *निन्न दिव्य मूरितय कण्णुदणियनोडि धन्यनादेनोधरेयोळु।*

**अनुपल्लवी** : *इन्नु ई भव भयके अंजलेतको चेन्न सिरि वेंकटेश।*

*।।श्रीशा।।*

(तेरी दिव्यमंगलमूर्ति को देखकर मैं धन्य हुआ। हे वेंकटेश्वर स्वामी! अब इस पृथ्वी के भवबंधन से युक्त पीड़ाओं से ड़रने की आवश्यकता नहीं है।)

**चरण :** *एनु जन्मद पुण्य बंदोदगितो*

*श्रीस्वामि पुष्करिणियोळु।*

*स्नान जपतपमाडि वरहदेवरनोडि*

*श्रीस्वामि महद्वारके।*

*ई शरीरवनु ईड्याडि प्रदक्षिणेमाडि*

*लेशदिम्पज्ञगलुतलि।*

*आसुवर्णदगरुड गंभवने नोडि*

*संतोषदिंकोडाडिदे।।बिडदे।।*

अनगिनत जन्मों से संचित पुण्य के बल पर, इस पर्वत पर आकर, श्रीस्वामिपुष्करिणी में पुण्य स्नान, जप-तप करके, वराह स्वामी का दर्शन पाकर, श्रीहरि के महाद्वार पर पहुँचकर, साष्टांग प्रणाम समर्पित कर, प्रदक्षिणा करने के बाद, स्वामी की प्रार्थना-स्तुति करके, सुवर्ण गरुड़ स्तंभ को देखकर, परमानंद का अनुभव पाया।

*''नोट्ट नेरडने द्वारदांटिपोगुतलि दट्टणियुं बहुजनदलि।*

*घट्टमनदलि तलेय चट्टिडुतनेट्टने कटांजनेके बरुतलि।*

*कृष्णाजिनदवर पेट्टगलकाणुतलि कंगेट्टु हरियेनुतलि।*

*बेट्टदधिपतिनिन्न दृष्टिंद काणुतलि। सुट्टतेन्न यदुरितवु सर्ववु।।''*

दूसरे द्वार को पार करके, भक्तजन के द्वारा गोविन्द का नामस्मरण सुनते हुए, अंदर चलकर, सप्ताचलाधीश का दृग्दर्शन पाकर, ऐसा माना कि मेरे सारे पाप राख बन गये।

*''शिरदल्लि रविकोटि तेजदिन्दे सेवंथ वरकिरीटवुकुंडल।*

*कोरळिळिहसरिगे वैजयंतियमां परिपरि हारलनु।*

*उरदि श्रीवत्सनु करदिशंखचक्रगलु वरनाभि माणिकवनु।*

*निरुपममणिखचित कटि सूत्र पीताम्ब्रचरण द्वयंदुगेयनु*

*।।इन्नु।।''*

करोडों सूरज के कांतिपुंज समान मुकुटधारी सिर को, कुंडलों से विभूषित कर्णपुटों को, वैजयंती माला तथा अन्य मालाओं से सुसज्जित कंठ, ग्रीवा को, श्रीवत्स से विभूषित वक्षःस्थल को, शंख तथा चक्र धारी हस्तों को, अनमोल रत्नों से सुसज्जित नाभि भाग को, मणि-रत्नखचित कटिबंध को, पीताम्बर से सुअलंकृत शरीर को, नूपुर से विभूषित चरण कमल युग्म को मैंने देखा।

*''इक्षुचापनपितने पक्षींद्रवाहनने लक्ष्मीपति कमलाक्षने।*

*अक्षय अजसुरेन्द्रादि वंदितने साक्षाज्ञगन्नाथने।*

*राक्षांतकने निरपेक्ष नित्यतृप्तने निरुपम निस्सीमने।*

*कुक्षियोळ गीरेळुलोकवनु ताळदवने*

*रक्षिसुवुदेंदयादीमुवदि।।''*

उदर में सात लोकों को धारण करनेवाले हे मन्मथजनक! गरुड़वाहनारूढ़, लक्ष्मीपति, कमलाक्ष, अक्षय, ब्रह्म तथा इंद्रादि से स्तुत्य हे जगन्नाथ! हे राक्षसांतक, निरपेक्ष-नित्यतृप्त-निरुपम-निस्सीम स्वामी, सदा मेरी रक्षा करो स्वामी।

क्रमशः

(गतांक से)

# तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

## (तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

## अध्याय - ४

*अनेन पापजालं वै यस्माद् दग्धं द्विजन्मनः॥*

(ब्र. पु. अ. 6. श्लो. 42)

*वेङ्कटाचल इत्यस्य प्रसिद्धिर्भुवि वर्तताम्।*
*सर्वा पापानि वें प्राहुः कटस् - तद् - दाह उच्यते॥*

(वही. श्लो. 43)

*सर्वपाप दहो यस्माद - वेङ्कटाचल इत्यभूत॥*

(वही. श्लो. 44)

*तदा नाम चकार आद्रेर्वेङ्कटाचल इत्यपि।*
*सर्व पापानि वें प्राहुः - कटस् तद्दाह उच्यते॥*

(भवि. पुराण, अ. I, श्लो. 226)

*तस्माद वेङ्कट शैलो अयं लोके विख्यात कीर्तिमान।*

(वही. अ. v, श्लो. 227)

**श्रीनिवासगिरि :** देवताओं के इस गिरि पर भगवान विष्णु ने दर्शन दिया था। विष्णु के वक्षःस्थल पर दक्षिण पार्श्व में (दायी ओर) श्रीलक्ष्मी का वास है। इसीलिए भगवान विष्णु का सार्थक नाम 'श्रीनिवास' है। उन्होंने इस गिरि को वास बनाया। इसीलिए इस गिरि का नाम 'श्रीनिवासगिरि' पड़ा।

**आनंदाद्रि :** श्रीवैकुण्ठ के निवासी देवता समूह का आनंद के साथ यहाँ रहना और अखण्ड आनंद प्रदाता भगवान का वास क्षेत्र होना दोनों इस नाम के पीछे है। 'आनंदाद्रि' वास्तव में सब भक्तों को आनंद प्रदान करनेवाली अद्रि है।

**श्रीशैल :** आनंद और संपत्ति प्रदान करने की विलक्षण शक्ति से विलसित होने के कारण और श्रीलक्ष्मी देवी का वास स्थान होने के कारण यह शैल 'श्रीशैल' कहलाता है।

**शेषशैल, शेषाचल और शेषाद्रि :** द्वापर युग में वायुदेव एक बार भगवान श्रीमन्नारायण के दर्शनार्थ तूफानी वेग से वैकुण्ठ पहुँचे। उस समय भगवान विष्णु श्रीदेवी के साथ विलास मंदिर में थे। उस समय द्वार रक्षक आदिशेष थे। उन्होंने वायुदेव को रोका। इस पर वायुदेव क्रुद्ध हुए। दोनों के बीच कुछ समय तक द्वंद्व युद्ध चला। अंततः वे नारायण के पास पहुँचे। हर एक ने अपना दर्प प्रदर्शित करते हुए कहा कि वही पराक्रमी है और श्रेष्ठ है। उनके बडप्पन की परीक्षा के लिए भगवान ने आदिशेष से कहा कि ''तुम अपने बल से आनंद पर्वत को कसकर पकडे रहो।'' वायुदेव से कहा - ''तुम इस पर्वत को मेरु पर्वत की उत्तरी दिशा में उड़ाकर फेंको।'' परीक्षा का स्वरूप यही था कि

वायुदेव आदिशेष के परिष्वंगन (घेरे से) पर्वत को हिलायेगा। वायुदेव और आदिशेष के बीच शक्ति प्रदर्शन की यह परीक्षा थी। भयंकर होड चली। समस्त संसार हिले। शेष की विष ज्वालाओं और वायुदेव के प्रकंपनों से सर्वत्र हलचल मच गयी। ब्रह्म, इंद्र और समस्त देवता समूह वहाँ पहुँचा। संग्राम को विराम देने की बात कही। प्रार्थना की। परन्तु न वायुदेव ने बात सुनी और न ही आदिशेष ने। तब ब्रह्म ने आदिशेष से कहा - ''भगवान विष्णु आपकी असमान शक्ति को जानते हैं और हम सब भी। विश्व मंगल के लिए हे आदिशेष! आप कुछ ढीला कीजिए ताकि आप की कृपा से वायुदेव को विजय मिले। हमेशा विष्णु की सेवा में रत रहने के कारण आपने पूर्णता पायी है। ईर्ष्या आप के लिए शुभकर और श्रेयस्कर नहीं है।'' इस पर आदिशेष ने अपने को थोडा ढीला किया। वायुदेव का प्रकोप बढा। तेज तूफानी हवा चली। आनंद पर्वत केवल आधी क्रोश की दूरी पर जा गिरा और सुवर्णमुखी नदी की उत्तरी दिशा में स्थिर हो गया। आदिशेष अपने पर थोपी गयी पराजय से कुछ खिन्न अवश्य हुए। ब्रह्म तथा अन्य देवताओं ने उन्हें फिर समझाया ''आप वेंकटाद्रि में समाहित रहेंगे और भगवान विष्णु भी यहाँ रहेंगे।'' इसके बाद ब्रह्मादि देवता समूह वहाँ से अपने-अपने लोकों की ओर चल दिया। तब आदिशेष विष्णु के सामने प्रणमित हुए। फिर वे एक विशाल पर्वत बने। इसकी विस्तृति तीस योजन पर्यन्त थी। **आदिशेष का फण वेंकटाद्रि बना जहाँ पर श्रीवेंकटेश्वर विलसे। मध्यभाग अहोबिलम् हुआ। यहाँ पर श्रीनृसिंह स्वामी ने अपना वास बनाया। पूँछ का भाग श्रीशैल बना जहाँ श्रीमल्लिकार्जुन रहने लगे।** इस प्रकार द्वापर युग में यह पर्वतमाला शेषशैल और शेषाद्रि नामों से ख्यात हो गया।

(यह गाथा भविष्योत्तर पुराण भाग - 1, श्लो. 85 - 132 में मिलती है।)

इस तरह उस समय से पवित्रता तथा महानता से लसित होकर स्वर्ग का क्रीडाचल श्रीवराह स्वामी और श्रीवेंकटेश्वर भगवान के लिए पृथ्वी का वास क्षेत्र बना। अनेक शुभ लक्षणों एवं सुगुणों से अभिमण्डित हो यह क्षेत्र अनुपम शक्तियों से पूर्ण हुआ है। चतुर्मुख ब्रह्म, षण्मुख सुब्रह्मण्य, सहस्राक्ष इंद्र और सहस्रफणी आदिशेष सब मिलकर भी इस क्षेत्र की महिमा का वर्णन नहीं कर पायेंगे। चाहे सामान्य की चर्म चक्षुओं के लिए सामान्य पहाड सा भले ही क्यों न दिखे, फिर भी मानवों की भक्ति यहाँ प्रफुल्लित होकर निर्मल बनेगी। भक्ति की तीव्रता से मानव वांछित फल प्राप्त करेंगे। संक्षेप में कहा जाय, तो यही होगा कि समस्त मानव कोटि को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि यहीं मिलेगी। तपस्या करने की शक्ति के अभाव में भी मानव वेंकटाद्रि से आलंबन पायेंगे और मुक्ति प्राप्त करेंगे।

(वराह पु. भाग-1, अ. 4, श्लो. 35-37 तथा अ. 3, श्लो. 32-33)

क्रमशः

“यानि तुम पांडवों को ही ज्यादा विद्याभ्यास करवाया। हमें थोडा कम सिखाया। उसमें भी तुम्हारे पुत्र को भी नहीं दिये अस्त्रशस्त्र उस अर्जुन को दिया तुमने। वो तो तुम्हारे सामने ही तुम्हें मारने के जैसे खडे हुए हैं। कैसा दिमाग है तुम्हारा।” कहा! उनके पास बडी सेना है। उन्हें सात अक्षौहिण है। इनके पास ग्यारह अक्षौहिण है। उनके पास कम है। अंदर ईर्ष्या है। ईर्ष्या किसलिए? उन पांडवों के पास राज्य नहीं था। राज्यभ्रष्ट, किसी काम के लिए उपयोगी नहीं है। उनके पास कुछ भी नहीं है। उनकी ओर कोई भी खडे नहीं होंगे।

सोचा कि- उनकी तरफ खडे होने वाले कोई नहीं है। लेकिन पांडवों ने उनकी धर्मदीक्षा से सात अक्षौहिण सेनाओं को ले आये। उनकी तरफ खडे होने वाले हैं। विशेष रूप से श्रीकृष्ण परमात्मा उनकी ओर है। इस असूया तत्पर से महतीम् चमूम कह रहा है। वास्तव में अपनी सेना पर भरोसा ज्यादा रहना है लेकिन दूसरों की सेना पर ज्यादा भरोसा है। इस प्रकार बात करना थोडे आवेग में रहने पर या तो दुःख में रहने पर इस प्रकार बात करना सहज ही हो सकता है। इसके बाद किये बात कोई सामान्य सह नहीं सकता। क्या कह रहा है कि - “व्यूडां दृपदपुत्रेण”। दृपद पुत्रेण अर्थात् दृष्टद्युम्न है न! दृपद शब्द कहने में अत्यंत एक तरह के हिंसा पर बातों से हिंसा करने का स्वभाव से युक्त पद था। दृपद महाराज पांडवों का मामा है। वह और द्रोणाचार्य बचपन में ही सहाध्याय हैं। द्रोणाचार्य के पिता के यहाँ दोनों सहध्याय है। वे दोनों बहुत दोस्ती से रहने लगे, दृपद ने कहा कि- मैं बडे होने के बाद राजा बन जाऊँगा ना। तुम भी आ जाओ। तुम्हें ठीक तरह से सुखी रखूँगा।

दोनों दोस्त हँसकर इन बातों को साधारण के रूप में लिये। बाद में विद्याभ्यास पूरा हो गया। दोनों अपने-अपने रास्ते में चले गये। दृपद महाराज बन गये। इतने में द्रोण को कृपि नामक स्त्री से विवाह हुआ। उनको अश्वथ्थाम नामक पुत्र का जन्म हुआ। तब तक द्रोणाचार्य जंगल में ही रहा। ओ जंगल भी कीकारण्य है यानि एक गाय भी वहाँ नहीं मेलेगा। गायें नहीं रहने के कीकारण्य में वे रहने लगे।

जागरुकता से तप करने का वंश है। उनका वंश भी बडा है। ऐसे द्रोण बच्चे के जन्म होने के बाद उसको दूध का स्वाद किसने करवाया है पता नहीं लेकिन वह बच्चा दूध माँगा। द्रोण ने पूछा कि दूध माने क्या है? तब उस बच्चे ने जवाब दिया कि, वही ना सफेद रंग में रहता है, पानी-पानी के रूप में रहता है ना। द्रोण और उनकी पत्नी ने अरण्य में मिलने वाले धान्य ले आकर उसे आटा बनाकर उस आटा में पानी मिलाकर दिया। लेकिन बच्चे नहीं माना ये तो दूध के स्वाद में नहीं है। इसलिए द्रोण ने अपने बच्चे के ऊपर रहे प्यार से एक गाय पाने के लिए निकलपडा।

क्रमशः

# परम पवित्र मंगल द्रव्य नारियल का महत्व

तेलुगु मूल- डॉ.सी.मधुसूदन शर्मा
हिन्दी अनुवाद - डॉ.एस.हरि
मोबाइल - ९३९८४५४१६८

यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भारतीय संस्कृति और परंपराओं में एक विशेष महत्व प्राप्त नारियल का स्थान सर्वोपरी है। कल्पवृक्ष माने जाने वाला नारियल के बिना कोई शुभकार्य नहीं होगा।

संस्कृत में नारिकेल नाम से अभिहित किया जानेवाला नारियल बहुत दृढ़ होने के कारण दृढ़फल, हमेशा फल देते रहने के कारण 'सदाफला', नागेंली जैसे पत्ते होने के कारण 'लांगली' आदि ऐसे कई प्रकार के संस्कृत नाम भी इसे प्राप्त हैं। नारियल के फूल, पत्ते, रेशा, छिलका, फल, छाल, जड़ आदि सभी हमारे लिए उपयुक्त है। इसलिए यह कल्पवृक्ष कहा जाता है।

इतिहासकारों के अनुसार केरल की क्षेत्रीय भाषा मलयालम में 'केरा' माने 'नारियल का पेड', 'आलम' माने 'जमीन के अर्थ' में नारियल के पेड बहुतायत होने के कारण केरल राज्य को वह नाम रखा गया है।

हमारे देश में केरल, महाराष्ट्र प्रांत में नारियल का उपयोग करके 'नर्ली पूर्णिमा' नामक त्यौहार मनाया जाता है।

एरेकेसी नामक वृक्ष परिवार से संबंधित इसका शास्त्रीय नाम 'कोकस न्यूसिफेरा' है। हिंदी में नारियल का पेड और अंग्रेजी में 'कोकनट ट्री' कहते हैं।

हमारी वैवाहिक व्यवस्था में आचार-परंपराओं के अंतर्गत विवाह क्रतुओं में 'मंगलसूत्र' को भी नारियल के ऊपर रखते हैं। यह इसकी पवित्रता का बोध कराता है।

हम सबको यह पता है कि होमादि कार्यक्रमों का निर्वहण करते समय पूर्णाहुति में इस फल का समर्पण किया जाता है।

इतनी आध्यात्मिक प्रधानता प्राप्त यह नारियल पोषक द्रव्य के रूप में, सौंदर्य साधन द्रव्य के रूप में, विविध प्रकार के अस्वस्थ समस्याओं को दूर करने का औषधों की खान के रूप में प्रसिद्ध है। अब यह जानेंगे कि उन बीमारियों के लिए आहार औषध के रूप में इस नारियल को किस प्रकार उपयोग किया जाता है?

**बालों (केशों) की वृद्धि के लिए :** सूखा नारियल का महीना पीसा चूर्ण, काला तिल का चूर्ण, आँवला का चूर्ण, गुड ५० ग्राम की मात्रा में मिलाकर रख लें। बाद

में उसे अच्छा कूटकर दोनों वक्त एक चमच औषध को चाटकर एक कप दूध का सेवन करते रहने से बाल को अच्छा पोषण मिलकर, बाल घने, काले और चमकदार बनकर आकर्षणीय रूप में बढ़ते हैं।

**मुहाँसे के लिए :** रोजान १-२ बार १०० मि.ली. नारियल के दूध से कुल्ला करते रहने से मुहाँखे कम हो जाते हैं।

**पेट की छोटी आंत के अल्सर के लिए :** रोजाना एक बार १००-२०० मि.ली. नारियल के पानी में १० ग्राम कच्चा नारियल का चूर्ण, ५ ग्राम बबूल गुड का चूर्ण, एक इलाची के बीजों का चूर्ण मिलाकर सेवन करते रहने से पेट की छोटी आंत के अल्सर, फोडे कम हो जाते हैं।

**विविध प्रकार के सिर दर्द के लिए :** रोजाना खाली पेट से १०० मि.ली. नारियल के पानी में एक चमच बबूल गुड़ का चूर्ण मिलाकर सेवन करते रहने से अच्छा परिणाम दिखायी देता है।

**पसीना पागल के लिए :** नारियल के दूध में पर्याप्त मात्रा में जीरे का चूर्ण मिलाकर सूखने के बाद सुन्नी आटे के साथ स्नान करते रहने से जल्दी यह समस्या कम होती है।

**रूसी के लिए :** सप्ताह में एक-दो बार नारियल के दूध सिर पर लगाकर एक घंटे के बाद गरम पानी से सिरोस्नान करने से रूसी की समस्या नियंत्रण में

होती है। बाल अच्छी तरह से बढ़ने के साथ-साथ चमकदार बनते हैं।

**जला हुआ घायल और फफोले :** नारियल का पानी, चूने का पानी समान मात्रा में मिलाकर थोडा हल्दी डालकर मिला लें। इसे घायलों पर हर दिन दो बार लेपन करने से जल्दी यह समस्या कम होती है। इस औषध को इस प्रकार उपयोग करने से हाथ और पैर के जलन और फोडे कम हो जाते हैं।

**मूत्र में जलन :** रोजाना सुबह और शाम हर वक्त १००-२०० मि.ली. नारियल के पानी में एक चमच अदरक का रस मिलाकर सेवन करते रहने से मूत्र में जलन, दर्द, झटपट जैसी समस्याएँ शीघ्र कम होती हैं।

**शांतिपूर्ण निद्रा के लिए :** सूखा नारियल, पौपीज, बबूल गुड के चूर्ण समान मात्रा में मिलाकर रख लें। थोडे दिनों तक रात के समय हर दिन सोते वक्त १०० मि.ली. गरम दूध में एक चमच, यह चूर्ण मिलाकर सेवन करते रहने से शांति-पूर्ण नींद लगकर अच्छा स्वास्थ्य बना रहता है।

**हाथ और पैरों की दरारें :** नारियल का दूध, ग्लिजरिन १० ग्राम की मात्रा में लेकर दोनों को अच्छी तरह से मिलाकर लेपन करते रहने से अच्छा प्रयोजन मिलकर हाथ और पैरों की चिकनाई बढ़ती है।

❖❖❖

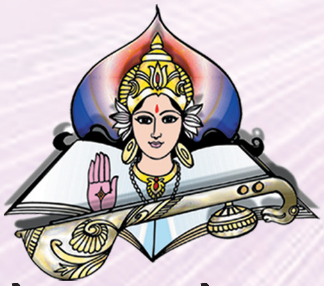

# आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

लेखक - महामहोपाध्याय काशिकृष्णाचार्य

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी

मोबाइल - ९९४९८७२१४९

## दशमः पाठः - दसवाँ पाठ

1. देवाः = भगवान (देवता)
2. अन्यत्र = एक और स्थान
3. कुर्वन्ति = कर रहे हैं
4. देवं = भगवान की
5. तथा = साथ ही साथ
6. कुरुथ = आप कर रहे हैं
7. देवान् = भगवान को
8. सर्वत्र = हर जगह
9. कुर्मः = हम कर रहे हैं

**प्रश्न :**

1. यूयं तत्र किं कुरुथ?
2. वयं तत्रास्म।
3. किमपि नास्ति।
4. ते तत्र किं कुर्वन्ति?
5. न किञ्चिदपि।
6. वयं किं कुर्मः?
7. देवाः कुत्रासन्?
8. कुत्रापि नासन्।
9. अग्रजाः के?
10. ते सर्वेऽपि अग्रजाः।

**जवाब :**

1. तुम वहाँ क्या कर रहे हो?
2. हम वहाँ से हैं।
3. कुछ नहीं।
4. वे वहाँ क्या कर रहें हैं?
5. कुछ नहीं करना।
6. हम क्या कर रहे हैं?
7. देवता कहाँ हैं?
8. कहीं नहीं।
9. बड़ा लोग कौन हैं?
10. ये सभी अग्रजस भी हैं।

**प्रश्न :**

1. कोई क्या कर रहा है?
2. वे कहीं और होंगे।
3. अच्छा किया।
4. उफ! आप यहाँ पर क्या कर रहे हैं?
5. कुछ नहीं।
6. कुछ नहीं हैं।
7. कितने नहीं हैं?
8. हम सब यहाँ हैं।
9. वे सब परमेश्वर के हैं।
10. हम सब कुछ भी नहीं किया।

**जवाब :**

1. के किं कुर्वन्ति?
2. ते अन्यत्र सन्ति।
3. तथा वा!
4. हन्त! यूयमत्र किं कुरुथ?
5. किमपि नास्ति।
6. केचन तत्र न सन्ति।
7. कतिचन न सन्ति?
8. वयं सर्वेऽपि अत्रैव स्मः।
9. एते सर्वेऽपि देवाः इति।
10. वयं सर्वेऽपि किमपि न कुर्मः।

# आप भला जग भला

- श्रीमती के प्रेमा रामनाथन
मोबाइल - ९४४३३२२२०२

समाज सामान्य मनुष्यों का संगठन है। इस समाज की समृद्धि मानव समाज के विचार और व्यवहार से ही संभव है। यदि मनुष्य का विचार कलुषित है तो उसका बुरा असर उसी पर ही पडता है। महर्षि वशिष्ट का आश्रम दंडकारण्य वन में एक शांत वातावरण में बना हुआ था। वे उस शांत वातावरण में कठोर तपस्या करके अनेक वर प्राप्त कर चुके थे। जिससे उनका नाम चारों ओर फैला हुआ था। उसी वन में कुछ अन्य साधु भी रहते थे। वे महर्षि वशिष्ट की कीर्ति से एकदम ईर्ष्या करते थे। वे किसी न किसी प्रकार उनकी कीर्ति पर कलंक लगाना चाहते थे। इसके लिए वे उचित समय की इंतजार में थे।

एक बार उस वन में सूखा पड गया था और नदी-नाले, पोखर-ताल आदि सब सूख गये थे। जिससे पानी का मिलना मुश्किल होगया था। इसलिए अनेक जीव-जंतु रोज-रोज मर रहे थे। यह देखकर महर्षि वशिष्ट बहुत दुखित होगये थे। वे सूखे से जीवों को बचाने के विचार से भगवान वरुण के प्रति कठोर तपस्या करने लगे। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान वरुण उनके समक्ष आये और पूछे, ''तुमको क्या वर चाहिए?'' महर्षि वशिष्ट ने भगवान को देखकर कहा, ''हे भगवान! मुझे कुछ नहीं चाहिए। इस वन में कठोर सूखे के कारण जीव सब मर रहे हैं। उनकी रक्षा में वर दीजिए।''

यह सुनकर भगवान वरुण बहुत खुश हुए। उन्होंने उनके आश्रम के पास जो कुआँ सूख गया था, वहाँ सदा पानी मिलते रहने का वर दिया। महर्षि वशिष्ट ने अन्य साधुओं को बुलाकर खुले दिल से कहा, ''आप सब इस कुएँ का फायदा उठा लीजिए।'' महर्षि के ऐसे कार्य से उनका नाम और भी उजागर होगया। इससे उन साधुओं के मन में खुशी तो नहीं हुई, बल्कि ईर्ष्या अधिक बढ गयी। आखिर वे पास के नैमिशारण्य नामक वन में तपस्या करने वाले ऋषि वल्लभ से मिलने गये। ऋषि वल्लभ तो महर्षि वशिष्ट की कीर्ति के बारे में जानते थे, परंतु कभी उनसे मिले नहीं थे। ईर्ष्यालू साधुओं ने उनसे मिलकर महर्षि वशिष्ट के बारे में बहुत बुरा-भला कहा। उनकी बातों में आकर ऋषि वल्लभ ने निश्चय कर लिया कि महर्षि वशिष्ट बडे घमंडी हैं, उनके घमंड को दूर करन के लिए उचित पाठ सिखाना चाहिए।

एक बार ऋषि वल्लभ अपनी एक गाय को महर्षि वशिष्ट के खेत में चरने के लिए छोड दिया। तब उस ओर आए वशिष्ट जी ने गाय के भगाने के लिए उसके पास आकर उसे हल्के से थपकी दी। परंतु वह गाय ऋषि वल्लभ के प्रभाव के कारण वहीं मर गयी। उस समय वल्लभ जी वहाँ प्रकट होकर उस पशु हत्या के लिए महर्षि वशिष्ट को दोषी ठहराया। वशिष्ट जी ने भी समझा कि उनकी गलती के कारण ही गाय की हत्या हुई है। उसके बाद ऋषि वल्लभ ने वशिष्ट जी को शाप दिया, ''तुम्हारा सारा तपोबल नष्ट हो जाए।'' वल्लभ जी के शाप से महर्षि वशिष्ट दुखी नहीं हुए। उन्होंने अपने मन में सोचा कि यह शाप तो पशु-हत्या का सही दंड है। इस घटना के बाद फिर वन में फिर सूखा पड गया और पानी का मिलना कठिन हो गया। पानी के अभाव के कारण सारे जीव परेशान होने लगे। इससे दुखित वे ईर्ष्यालु साधु ऋषि वल्लभ से मिले और बोले, ''आप अपने तपोबल से कठोर सूखे से इन जीवों को बचाइए।'' उन साधुओं की प्रार्थना मानकर ऋषि वल्लभ भगवान वरुण के प्रति कठोर तपस्या करने लगे। परंतु उनकी तपस्या का कोई फल तो नहीं निकला। इस से एकदण क्रोधित ऋषि वल्लभ अब भगवान वरुण की स्तुति छोडकर उनकी निंदा करने लगे। तब उन्हें आकाशवाणी सुन पडी। उन्होंने सुना, ''हे महर्षि! आपके कारण ही गाय की हत्या हुई थी। परंतु आपने उसे छिपाकर महर्षि वशिष्ट को शाप दे दिया। आपके इस बुरे व्यवहार के कारण आपका तपोबल नष्ट हो गया है। यदि आपको फिर ऐसे महत्वपूर्ण तपोबल चाहिए तो फिर शुरू से कठोर तपस्या करनी पडेगी। अब इस सूखे को दूर करने का बल सिर्फ महर्षि वशिष्ट में ही है।'' अब ऋषि वल्लभ की आँखों खुल गयीं। वे साफ समझ गये कि उनकी ईर्ष्यालू प्रवृत्ति के कारण ऐसा हो गया है। तुरंत वे महर्षि वशिष्ट से मिलकर अपने पाप कर्म के लिए दुख प्रकट किया। अन्य साधु भी वशिष्ट जी से मिलकर अपनी ईर्ष्या के लिए क्षमा याचना की। वशिष्ट जी ने उनको ज्ञान प्रदान करके अपने तपोबल से पानी की अप्राप्ति को दूर करके जीवों को सूखे से बचाया।

❖❖❖

चित्रकथा

# वेंगमांबा भक्ति

तेलुगु में - डॉ.के.रविचंद्र
हिन्दी में - डॉ.एम.रजनी
चित्र - श्री के.तुलसीप्रसाद

तिरुमल के राचमार्ग में भक्तों का कोलाहल, गोविन्दा! गोविन्दा! महंत, दीक्षित व अन्य अर्चकगण के साथ वेंगमांबा का संभाषण को इस कथन में देख सकते है।

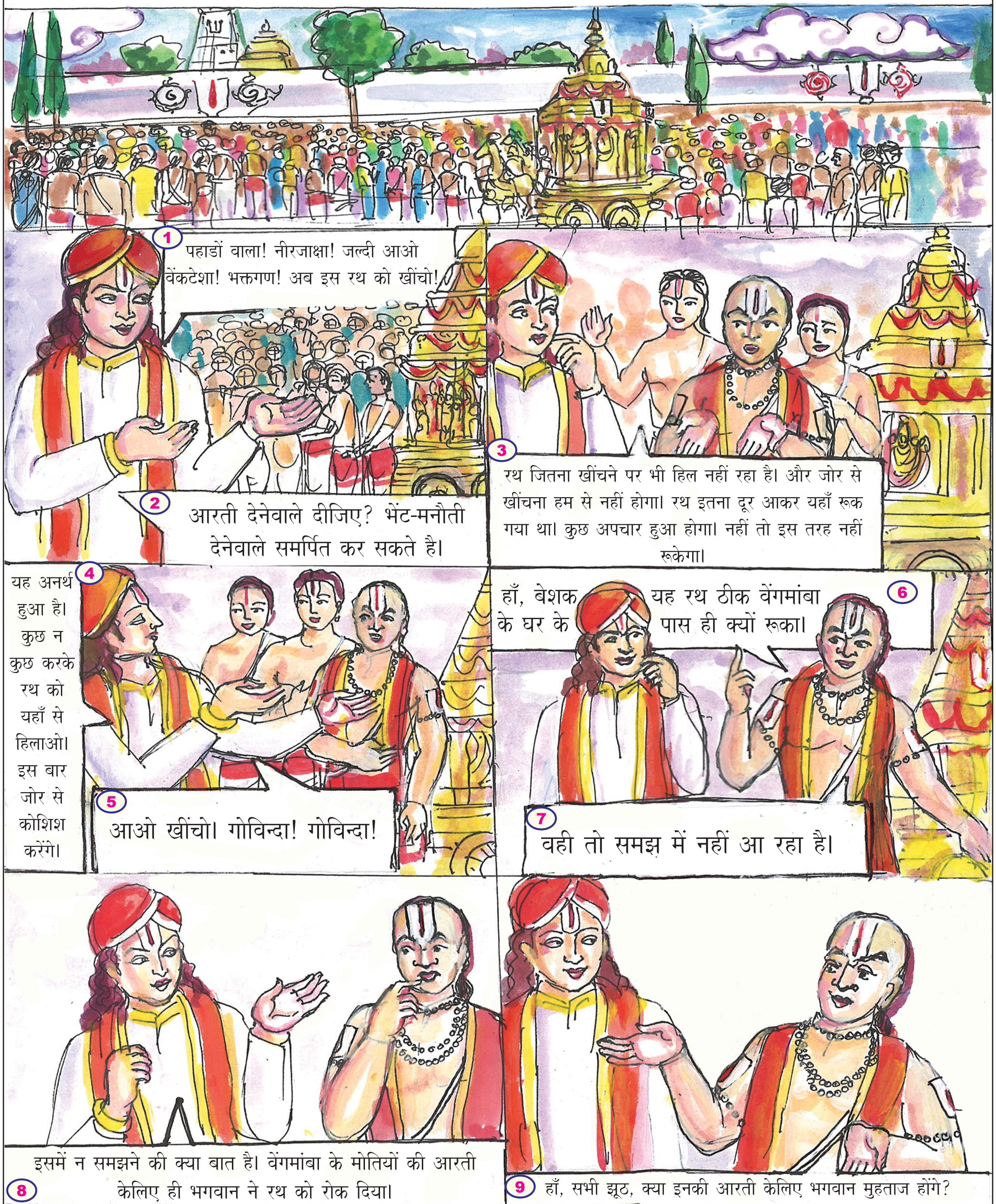

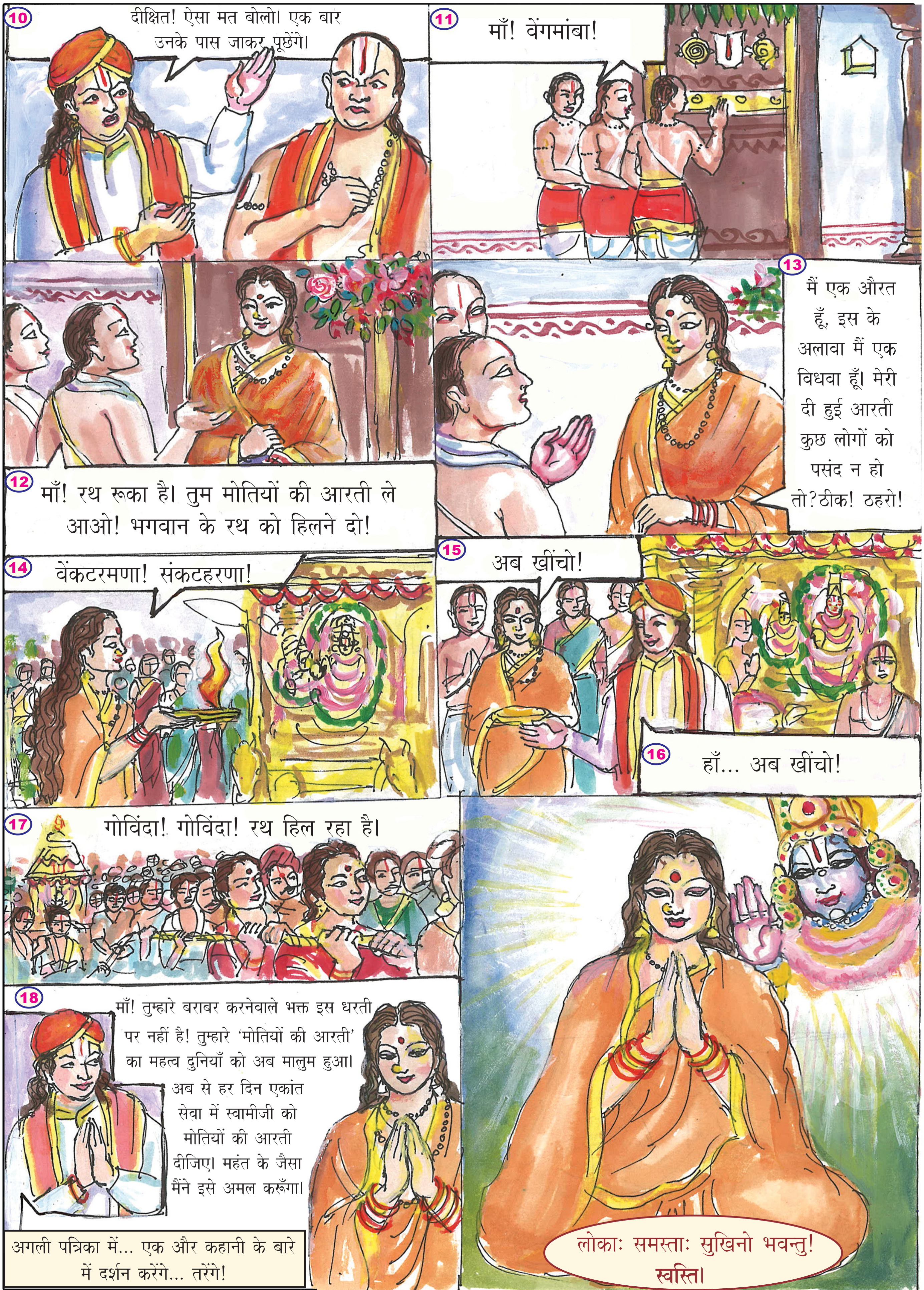
10
दीक्षित! ऐसा मत बोलो। एक बार उनके पास जाकर पूछेंगे।
11
माँ! वेंगमांबा!
12
माँ! रथ रूका है। तुम मोतियों की आरती ले आओ! भगवान के रथ को हिलने दो!
13
मैं एक औरत हूँ, इस के अलावा मैं एक विधवा हूँ। मेरी दी हुई आरती कुछ लोगों को पसंद न हो तो?ठीक! ठहरो!
14
वेंकटरमणा! संकटहरणा!
15
अब खींचो!
16
हाँ... अब खींचो!
17
गोविंदा! गोविंदा! रथ हिल रहा है।
18
माँ! तुम्हारे बराबर करनेवाले भक्त इस धरती पर नहीं है! तुम्हारे 'मोतियों की आरती' का महत्व दुनियाँ को अब मालुम हुआ।
अब से हर दिन एकांत सेवा में स्वामीजी को मोतियों की आरती दीजिए। महंत के जैसा मैंने इसे अमल करूँगा।
अगली पत्रिका में... एक और कहानी के बारे में दर्शन करेंगे... तरेंगे!
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु! स्वस्ति।

# 'क्विज'

आयोजक - डॉ.दिव्या.एन

१) दानवों का राजा कौन था?

अ) शुक्राचार्य आ) बलिचक्रवर्ती इ) वामन ई) रावण

२) कर्काटक संक्रमण समय को क्या कहते हैं?

अ) दक्षिणायण आ) उत्तरायण इ) शून्य ई) कुछ भी नहीं

३) लक्ष्मण की पत्नी का नाम क्या है?

अ) सीता आ) माधवी इ) ऊर्मिला ई) राधा

४) शिखंडी को पुरुषत्व प्रदान करनेवाले का क्या नाम है?

अ) चित्ररथ आ) स्थूणाकर्ण इ) हिरण्याक्ष ई) परशुराम

५) अर्जुन के शंख का नाम क्या था?

अ) देवदत्त आ) पौंड्र इ) अनंतविजय ई) पांचजन्य

६) सीता का हरण करते समय रावण ने किस की मदद ली?

अ) जटायु आ) शूर्पनखा इ) मारीच ई) कुंभकर्ण

७) श्रीकृष्ण के गोप सैनिक का नाम क्या है?

अ) चतुरंग आ) नारायण इ) प्रलयकार ई) वायुसेना

**जवाब**

१) आ २) अ ३) इ ४) आ ५) अ ६) इ ७) आ

# चित्रलेखन

इस चित्र को रंगों से अब भरें क्या?

बगल में सूचित चित्र को नीचे के डिब्बों में खींचिये-

Printed by Sri P. Ramaraju, M.A., Special Officer (Press & Publications), T.T.D. Press, Tirupati and Published by Dr.K. Radha Ramana, M.A., M.Phil., Ph.D., on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Published at Tiruapti-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

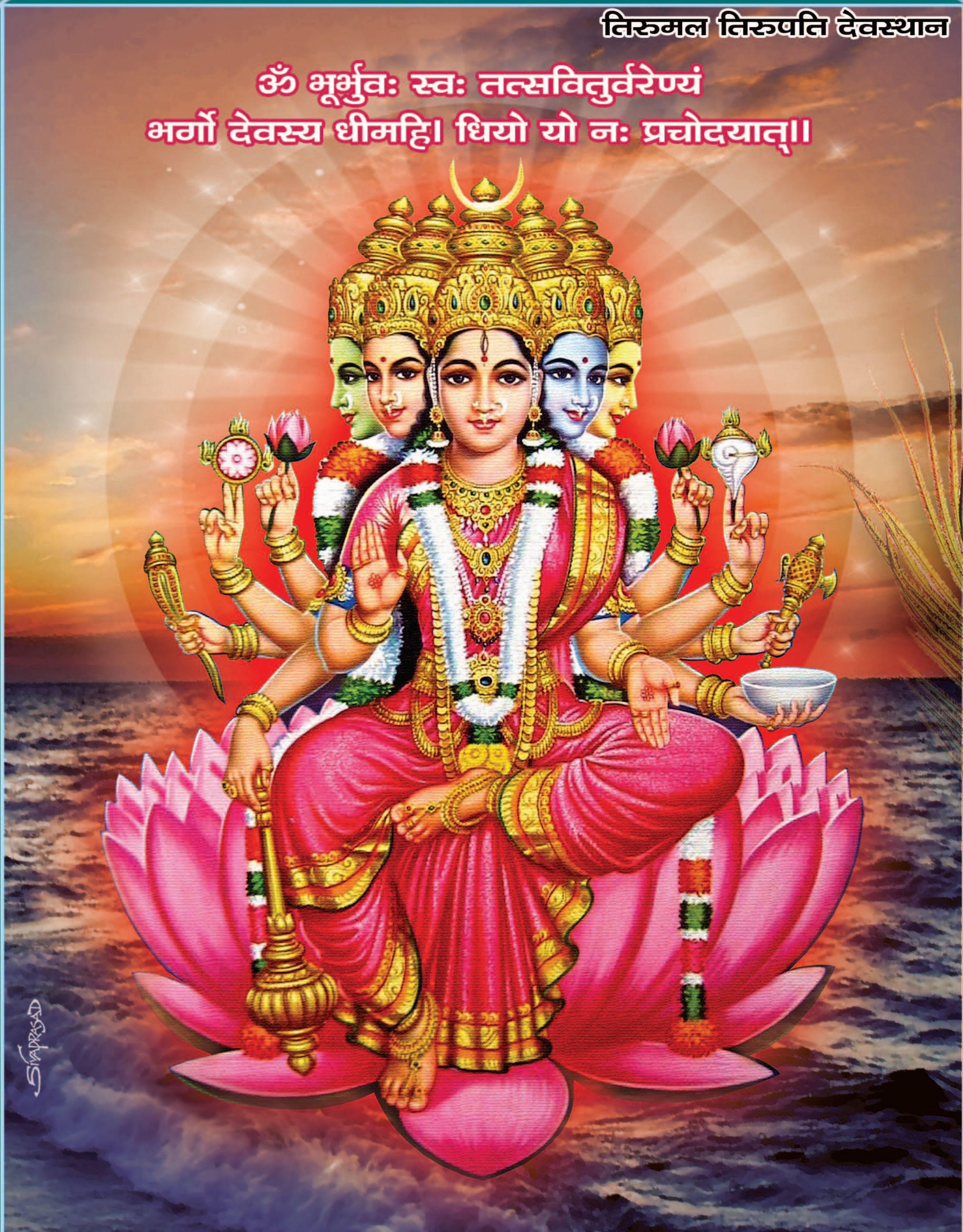
ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY
Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
Printing on 20-08-2021

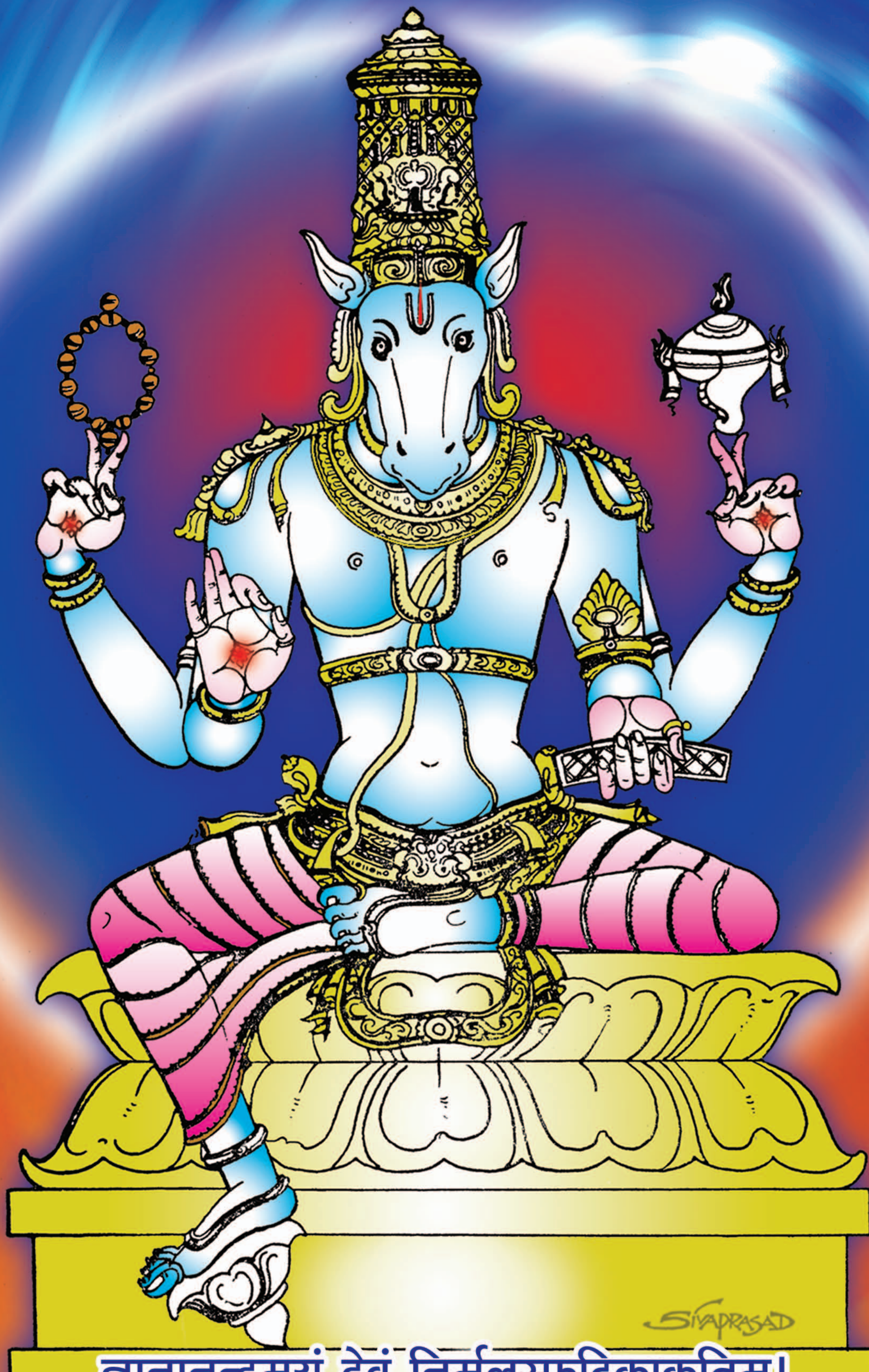


ज्ञानानन्दमयं देवं निर्मलस्फटिकाकृतिम्।
आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे।।